प्रकाशक :—
जवाहिरलाल जैन,
एम० ए०, विशारद
मंत्री,
श्री रामविलास पोदार स्मारक ग्रन्थमाला
नवलगढ़ ।

प्रथमावृत्ति १०००
१९३९

मुद्रक —
श्रीपतराय, सरस्वती प्रेस,
बनारस कैंट ।

रामविलास पोद्दार स्मारक ग्रन्थमाला
जवाहिरलाल जैन, एम० ए०, विशारद
द्वारा सम्पादित

४

अमर जीवन की ओर

श्रीमती लिली एलेन द्वारा लिखित
तथा
श्री शिवप्रसाद सिंह विसेन द्वारा अनुवादित

स्वर्गीय कुँ रामविलासजी पोद्दार

दो शब्द

कुँवर रामविलासजी पोदार नवलगढ तथा बम्बई के लब्ध-प्रतिष्ठ व्यापारी सेठ आनन्दीलालजी पोदार के कनिष्ठतम पुत्र थे। उनका जन्म ३ सितम्बर सन् १९१३ को बम्बई नगर मे हुआ था। 'प्रसाद चिन्हानि पुरः फलानि' के अनुसार उनकी गुण-गरिमा बाल्यकाल ही से प्रगट होने लग गई थी।

प्रारम्भिक शिक्षा घर मे ही प्राप्त करने के बाद रामविलासजी बम्बई के मारवाड़ी विद्यालय हाई स्कूल मे प्रविष्ट हुए, वहाँ से उन्होंने मैट्रिक्युलेशन परीक्षा पास की। इसके बाद वे सेंट जेवियस कालेज मे भरती हुए और सन् १९३४ मे उन्होंने बी० ए० की उपाधि प्राप्त की। इसके एक वर्ष पहिले ही कलकत्ते के मान्य व्यवसायी सेठ भूधरमलजी राजगढ़िया की सुपुत्री कुमारी ज्ञानवती से उनका विवाह सम्बन्ध हो गया था। तदानन्तर वे एम० ए०, एल-एल० बी० का अध्ययन करने लगे, पर व्यापार सम्बन्धी उत्तरदायित्व के बढते जाने के कारण उन्हें अध्ययन स्थगित कर देना पड़ा।

मैट्रिक्युलेशन पास करने के बाद से ही रामविलासजी ने व्यापार की ओर ध्यान देना आरम्भ कर दिया था और बी० ए० पास करने के बाद तो आनन्दीलाल पोद्दार एण्ड को० की सम्हाल और देख-रेख का अधिकाश कार्य-भार उन पर आ पडा। अपने थोड़े से व्यापारिक जीवन मे भी उन्होंने बहुत अधिक सफलता प्राप्त कर दिखाई और न केवल फर्म के प्रत्येक विभाग की ही उन्नति की किन्तु अनेक नवीन विभाग भी स्थापित किये।

व्यापारोन्नति से अधिक महत्त्वपूर्ण उनकी समाज-सेवा तथा देशभक्ति थी। अध्ययन काल मे भी वे असहाय छात्रो की हर तरह से मदद किया करते थे। पुस्तकें दिलवा देना, कपड़े बनवाना या फीस आदि दे देना उनके नित्य के कार्य थे। मारवाडी युवकों की उन्नति के लिये उन्होने 'मारवाडी स्पोर्टिङ्ग क्लब' की स्थापना की। बम्बई के प्रसिद्ध 'मेरी मेकर्स क्लब' के भी वे सरक्षक तथा सस्थापकों में से थे।

शिक्षा-सस्थाओ से रामविलासजी को विशेष प्रेम था। 'सेंट जेवियर्स कालेज' के गुजराती इन्स्टीटयूट की स्थापना मे उनका प्रमुख भाग था। 'मारवाडी विद्यालय' तथा 'सीताराम पोद्दार बालिका विद्यालय' के प्रत्येक समारोह मे वे बड़े उत्साह से भाग लेते थे। अपने पिता द्वारा स्थापित और सचालित सस्थाओं की सुव्यवस्था का उन्हें सदैव ध्यान रहता था। विशेषत. नवलगढ के 'सेठ जी० बी० पोदार हाई स्कूल' और साताक्रुज स्थित 'सेठ

आनन्दीलाल पोदार हाई स्कूल' का तो प्रबन्ध भार बहुत कुछ उन्हीं पर था और उनकी देखरेख में इन संस्थाओं ने उल्लेखनीय उन्नति की।

रामविलासजी को देश का भी पूरा ध्यान था। अल्पवयस्क होते हुए भी वे आधुनिक युग के उन्नत विचारों से भली भाँति परिचित हो गये थे। उनके विचार पूर्णतया राष्ट्रीय थे, जिनमें समाजवाद की भी कुछ झलक थी। कांग्रेस के प्रति उनकी श्रद्धा असीम थी और देश के महान् आन्दोलनों में उन्होंने बड़े नाजुक मौकों पर सहायता दी थी।

सब से बड़ी बात उनमें यह थी कि अन्य लक्ष्मीपात्रों की तरह वे कभी अर्थ-मदान्ध नहीं हुए। उनमें सहानुभूति, उदारता और स्वार्थत्याग कूट कूट कर भरे थे। उनका सादा गार्हस्थ्य जीवन, कर्त्तव्यशीलता और निष्कपट व्यवहार अनुकरणीय था। सन्क्षेपतः रामविलासजी बड़े शिक्षा प्रेमी, विद्वान् और व्यापार-कुशल थे और इनसे भी बढ़ कर थी उनमें सदाचारिता, सौजन्य, सहृदयता और देशभक्ति। यदि वे जीवित रहते तो नि:सन्देह समाज और देश की उनके द्वारा बहुत सेवा होती और वे जाति तथा देश का मुख उज्ज्वल करते, पर शोक है कि ८ जुलाई सन् १९३८ को कराल काल ने अकस्मात् मोटर दुर्घटना के बहाने इस युवकरत्न को केवल २३ वर्ष की अवस्था में अपना ग्रास बना लिया।

विषय क्रम

भाई श्यामलाल

और

सरला भाभी

को

अदृश्य शक्ति

मनुष्यने जान-बूझकर अपनेको प्रकृतिकी अदृश्य शक्तियांसे पृथक कर दिया है। इससे उसके हृदयको बहुत कम स्फूर्ति मिलने लगी है। वह रातको नक्षत्रोंका आवागमन देखता है; वह समुद्रके जड जलमें निश्चित समयपर ज्वार-भाटा भी देखता है। वह भली प्रकार जानता है कि उसी अपरिवर्तनशील शक्तिके कारण सूर्य प्रातः-काल ठीक समयपर निकलता और सायकाल ठीक समयपर अस्त होता है, कभी एक क्षणकी देर हो जाना असम्भव है। विस्तृत नीले गगन-में जलद-समूह आते हैं और भिन्न-भिन्न प्रकारके चित्र बनाते हैं। उसके

बाद वर्षा करके सभी प्राणियोंको आनन्द देते हैं। वह उषा और संध्याकी अरुणाई देखता है। वह जानता है कि वही अदृश्य परन्तु वास्तविक शक्ति वसन्तमें सभी प्राणियों एवं पुष्प, वृक्ष लतादिमें नव जीवनका सचार करती है। इतना देखनेपर भी वह भूल जाता है कि वह स्वयं उस शक्तिका एक अंश है। इस प्रकार भूलनेसे उसके हृदयको जो महान स्फूर्ति प्राप्त हो सकती थी वह नहीं मिलती।

एक ऐसी शक्ति है जो सूर्यको प्रकाशवान बनाती है और दिनके व्यतीत हो जानेके पश्चात् जब रात अपनी काली चादरसे दुनियाको ढक देती है तब उसी चादरमें वही शक्ति रत्न चमकाकर कुछ प्रकाश बिखेर देती है। यही शक्ति गुलाब की सुकोमल पखड़ियोंको अपनी अदृश्य कलमसे सुन्दर और अलौकिक रंगोंसे रंगकर बीचमें मधुर सुगन्धिका सार—पराग—रख जाती है। यही शक्ति मनुष्यके जीवनकी भी शक्ति है। परन्तु मनुष्य यह बात नहीं समझता।

इस शक्तिमें बलके सभी गुणोंका समावेश है। यही शक्ति दीर्घकाय पर्वतोंका निर्माण करती है, इसीके साँस लेनेके कारण विनाशकारी भूचाल आते हैं, यही शक्ति महासागरमें ज्वार-भाटाकी लहरोंका सचालन करती है, यही शक्ति वृक्षों और ऊँची चट्टानोंपर अम्बर-बेलिको पालती है, और यही नवजात शिशुकी कोमल उँगलियोंको चंचल रखती है। जीवन, प्रयत्न और बल, चाहे बड़े चाहे छोटे का हो, सबका स्रोत इसी शक्तिसे है। केवल एक अन्तर है। पर्वत और भूचाल

इसके अनन्त कालके आज्ञाकारी सेवक हैं; वे कभी इसके संकेतके बिना नहीं चल सकते। केवल मनुष्यको ही अपने जीवनमें इसका पथ-प्रदर्शन करनेका अधिकार और स्वतन्त्रता दी गई है। मनुष्य इससे पृथक् नहीं हो सकता। ईश्वरका अंश होनेके कारण वह इस शक्तिपर शासन करने और अपनी आज्ञानुसार चलानेका अधिकारी है और इसप्रकार वह अपने जीवनको आनन्दमय, सफल, सम्पन्न और सौभाग्यशाली बना सकता है। यही तो प्रत्येक मनुष्यके जीवनकी कामना है।

स्थूल प्रकृति इतनी सुन्दर और सम्पन्न क्यों है? इसका एकमात्र कारण यही है कि स्थूल प्रकृति इस अदृश्य शक्तिकी आज्ञा बिना किसी हिचकिचाहटके पालन करती है। 'प्रकृतिके साम्राज्यमें कहीं कमी नहीं है। भगवान उदारतापूर्वक प्रत्येक जीवधारीकी आवश्यकताकी पूर्ति करता है।' कुमुदनीके पुष्पको देखिये: क्या आपने कभी रसाल वृक्षके कोमल किसलयोंको गिननेका प्रयत्न किया है? क्या आपने कभी घासको ध्यानपूर्वक देखा है? क्या यह आपकी सामर्थ्य में नहीं है? छोटीसे छोटी वस्तुको ले लीजिये, और उसके सौन्दर्य एवं श्रेष्ठतापर विचार करिये। मौर-चन्द्रिकाको ध्यानसे देखिये, रंगो का कितना सुन्दर चुनाव एवं मिश्रण है। नीलकंठ आपने देखा होगा: उसके रंगमें क्या विशेषता है? मुर्गेके पंख कितने विभिन्न और चटकीले रंगोंसे बने हैं! किसी तितलीके डैनोंको खुर्दबीनसे देखिये। आप आश्चर्य करेंगे कि उस अदृश्य शक्तिने

इस नन्हेसे जीवके दुर्बल अवयवोंपर कितना सौन्दर्य बिछाया और कितने प्रकारके रंगोंसे चित्रकारी की है! देव वर्षामें शयन करते हैं, पृथ्वी जाडेमें शयन करती है। जब वसन्तमें पृथ्वी उठती है तब मनुष्य वृक्षोंमें नई कोपलोंको निकलते हुए देखता है, जब वह नगरसे दूर मुक्त वायुमण्डलमें घूमता है तब वह उस अदृश्य शक्तिको सर्वत्र वर्तमान पाता है। परन्तु वह यह नहीं समझता कि यदि वह चाहे तो उसी शक्तिसे अपने जीवनका भी पुनरुद्धारकर सकता है। बात यह है कि वह शक्ति केवल यही नहीं चाहती कि मनुष्य उसके अस्तित्वको माने वरन् यह भी कि मनुष्य उसको अपनी आज्ञानुसार चलावे। महात्मा ईसाने कहा था, 'मनुष्यको अपना साम्राज्य विस्तृत करना चाहिये।'

उस क्रियामें भी बुद्धिमत्ताका कुछ अंश है जिसमें मनुष्य उस शक्तिकी आज्ञानुसार चलनेके लिये आत्म-समर्पण कर देता है; पुष्प, वृक्ष, सूर्य और तारे एवं वायु और वरुण सभी इसी प्रकार उसकी आज्ञा माननेको सदा प्रस्तुत रहते हैं। मनुष्य जब दिनभर परिश्रम करनेके बाद थककर सध्या समय लेटता है तब वह मृत्युकी छोटी बहन नींदकी अद्भुत एवं रहस्यमयी गोदमें शान्ति एवं विश्वाससे पडकर थकान दूर करनेका सर्वोत्तम साधन प्राप्त कर लेता है, निशाके उस अंधकारमें भी और अकेले रहनेपर भी मनुष्य भयभीत नहीं होता। यदि मनुष्य एक बालककी भाँति पवित्र और भोला हो तो वह अपने मनमोहक भोलेपनसे

कह सकता है, 'हे भगवान, मैं विश्राम करनेकी इच्छासे शान्तिपूर्वक लेट गया हूँ कारण कि केवल आपही संसारके रक्षक हैं।' परन्तु वह 'केवल आपही' शब्दका आशय नहीं समझता। वह यह नही समझता कि उस अदृश्य शक्तिका यह दूसरा नाम है जो सूर्यको दिनमें तेजवान बनाती है और रातको चन्द्रमासे अमृत वर्षा करवाती है, जिसके सकेत मात्रसे ऋतुओंका परिवर्तन होता है और वे एक क्षण भी कहीं देर नहीं कर सकतीं। मनुष्य इतना तो जानता है कि यदि उसे साँस लेनेके लिए वायु न मिले तो वह एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता परन्तु वह कभी वायुके सम्बन्धमें विचार नहीं करता। वह अनजाने उस शक्तिके आगे माथा झुका देता है जो विस्तृत गगन-मडलमें सूर्यका रथ सचालन करती है; जो रातको उसी गगनमण्डलमें जगमगाते रत्नोंको बखेर देती है और पृथ्वीको डगमग नही होने देती। जब वह इस प्रकार आत्मसमर्पण कर देता है तब उसका जीवन सब तरहसे परिपूर्ण हो जाता है। यदि मनुष्य पूर्ण विश्वासके साथ बिना एकक्षण सोचे विचारे अपने जीवनकी महान विभूतियोंको उस अदृश्य शक्तिके हाथोंमें सौंप सकता है तो फिर वह रहने-सहने, काम करने और वार्तालाप करनेके समान साधारण कार्योंको उससे क्यों पृथक-पृथक रखना चाहता है? ऐसा करने से तो यह प्रकट होता है कि वह अकेले दुनियासे नितान्त पृथक है। मानो उसकी प्रसन्नता, उसकी इच्छा, उसकी कामना और उसके जीवनसे उस आदि शक्तिका कोई सम्बन्ध ही नहीं है।

मनुष्यके इस भयानक अज्ञान और अविश्वाससे प्रेरित होकर महात्मा ईसाने उन शब्दोंको कहा था जिन्हें ईसाई लोग पार्वतीय-प्रवचनके नामसे पुकारते हैं। 'आकाशमें उड़ने वाले पक्षियोंको देखो, वे बीज नहीं बोते, खेत नहीं काटते और न कोठारमें नाज ही एकत्रित करते हैं, फिर भी परम पिता उन्हें भोजन देता है। क्या तुम्हारा महत्व पक्षियोंसे भी कम है?' इसपर मनन करिये। मनुष्य-जातिके एक भागको इन शब्दोंको सुनते आज दो सहस्र वर्ष हो गये फिर भी वह इनमें विश्वास नहीं करता। वह अब भी समझता है कि उसे अपना जीवन-यापन करने के लिये अनुनय एव क्षोभ करना, दुख भोगना और कठिनाईमें रहना, और फिर भी निराश होना पड़ेगा। वह अब कल्पना करता है कि वह अनाथ समझा जाकर उस अदृश्य शक्तिसे पृथक कर दिया गया है जो चींटीसे लेकर हाथी तक सभी जीवोंकी रक्षा करती है, और उस जीवकी कुछ भी चिन्ता नहीं करती जो ईश्वरका अश है और उसीकी प्रतिमाके समान बनाया गया है।

मनुष्यपर उसी अदृश्य शक्ति द्वारा अनेक विभूतियोंकी वर्षा होती रहती है जो उसकी आवश्यकताओंसे भी अधिक हैं। महात्मा ईसा कहते हैं 'फूलोंको देखिये। वे बढनेके लिये परिश्रम नहीं करते हैं। फिर भी ससारके श्रेष्ठ राजाओंसे भी अधिक सुन्दरतासे वे सुसज्जित होते हैं। जब परमपिता उस घासको इस प्रकार सुसजित करता है जो आज फूली है और कल सुखाकर जला डाली जावेगी, तब क्या वह मनुष्यको उससे

अधिक सुसज्जित नहीं रखेगा।' इनपर मनन करिये। फूलोंसे क्या लाभ है ? फिर भी परमपिता इनको इस प्रकार सजाता है मानो वे दुनियाकी सर्वश्रेष्ठ वस्तु हों, संसारका सर्वश्रेष्ठ सौन्दर्य-प्रेमी परमपिता परमेश्वर ही हैं।

परमपिता केवल हमारी आवश्यकताओंकी पूर्ति ही नहीं करता है वरन् वह हमें सुन्दर बनाता है। वह हमें इस प्रकार सजाता है और इतनी मनोहारितासे भर देता है कि सम्राटके कोषके सारे रत्न भी बाजी नहीं जीत सकते।

दुनियाके स्त्री-पुरुष किसी बडे विद्वान अथवा महात्माका उपदेश या नया सिद्धान्त सुननेके लिये दौडते फिरते हैं फिर भी वे उस महान संदेशको सुनकर स्फूर्ति प्राप्त नहीं करते जो प्रत्येक फूल और प्रत्येक पक्षी बडी सरलता से हृदयगम करा सकता है। 'तब क्या वह मनुष्य-को सबसे अधिक सुसज्जित नहीं रखेगा ?'

मनुष्यने अज्ञान और मूर्खताके कारण अपनेको इन स्फूर्तिदायक पदार्थोंसे पृथक और दूर रखा है और यदि वह अपनी आवश्यक-ताओंको चींटीके बराबर भी सरलतासे पूरा नहीं कर पाता अथवा वह साधारण सुमनके समान भी सुन्दर नहीं बन पाता तो इसका एक-मात्र कारण यही है कि उसने अन्तिम वस्तुओंको प्रथम और प्रथम वस्तुओंको अन्तिम स्थान दिया है। 'वह उस परमपिताका दुलारा पुत्र है'—इस जन्मसिद्ध अधिकारको वह भूल गया है, उसने आत्मा-की जन्मभूमिका परित्याग कर दिया है; उसने उस साम्राज्यको छोड़

दिया है जो भगवानने उसे दिया था, थोड़ेमें, उसने भगवानके साम्राज्य और साधुवृत्तिमें कुछ नहीं ढूँढा जहाँ पर ये सब वस्तुयें मिल सकती हैं।

किसीने कहा है, 'मनुष्यकी कार्य-शक्तिकी सीमा कौन बना सकता है! एक बार न्याय और सत्यका पवित्र रूप देखनेपर हमें ज्ञात हो जाता है कि मनुष्यका विधाताके मस्तिष्कपर ही अधिकार है। अथवा यों भी कहा जा सकता है कि मनुष्य ही स्वय विधाता है। इस प्रकार हम यह जान जाते हैं कि बल और बुद्धिका उद्‌गमस्थान कहाँ है और यह कि सदाचार ही वह सोनेकी चाबी है जिससे अमर मदिरका फाटक खुलता है। यही विचार सत्यका उत्कृष्ट प्रमाण है क्योंकि यह हमें तप करके अपना ससार रचनेको उत्तेजित करता है।', दूसरे शब्दोंमें, 'पहले भगवानके साम्राज्य और साधुवृत्तिको प्राप्त करो और फिर तुम्हें सभी वस्तुएँ मिल जावेंगी'।

जब मनुष्य सदा इसी प्रकार विचार करता रहेगा; जब वह तप करनेके लिये दृढ निश्चय कर लेगा, जब मनको किसी एक विषय पर एकाग्र कर दिया जायगा, केवल उस बातपर विश्वास करके कि जो न तो कभी असफल हुई है और न होगी, जब मनुष्य मनको इस प्रकार एकाग्र कर लेगा तब उसे जीवन और उसकी आवश्यकताओंके सम्बन्धमें चिन्ता न होगी क्योंकि वह जो चाहेगा वह बिना किसी कष्टके प्राप्त होगा; वह जो आज्ञा देगा वही होगा।

सौन्दर्य

दार्शनिक इमर्सनने कहा है:—संसारको रंगकर और सजाकर सुन्दर नहीं बनाया गया है, यह सृष्टिके प्रारम्भसे ही सुन्दर है। एक बात और है। विधाताने कुछ वस्तुओंको सुन्दर नहीं बनाया है वरन् सौन्दर्यने ही विश्वकी सृष्टि की है।

संसारकी प्रत्येक भौतिक एवं स्थूल वस्तु किसी न किसी नैतिक तथा आध्यात्मिक गुणकी प्रतिनिधि है। प्रत्येक वस्तुका, जिसको हम देख अथवा छू सकते हैं, भौतिकके अतिरिक्त भी प्रयोग या अर्थ है। प्रत्येक वस्तुके दो रूप होते हैं और प्रत्येक वस्तुके प्रयोगके भी दो साधन हैं।

बहुधा मनुष्य वस्तुका केवल भौतिक रूप देखते या उपयोग आँकते हैं; अर्थात वे उस वस्तुसे कितना आनन्द या धन प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त उन्हें प्रकृतिके व्यजनोंमें कुछ भी गूढ अर्थ नहीं दिखाई पड़ता,—न तो आत्मा, न नैतिक-शक्ति और न सौन्दर्य। जो भौतिकके आगे।कुछ भी नहीं देखता, उस व्यक्तिके विषयमें एक कविने कहा हैः—

"सरितामें एक कमल खिला था,
परन्तु उसके लिये वह नीलकमल था,
इसके अतिरिक्त वह कुछ नहीं था।"

यह सत्य हैं कि "सौन्दर्य-प्रिय लोगोंकी दृष्टिमें प्रकृति अपना सौन्दर्य बढा देती है।" नील कमलको हम नील कमलसे अधिक उसी दशा में नहीं देख पाते जब कि मनमें प्रेमका चिरकाल तक अधिकार नहीं रहा अथवा प्रेम मनके तत्व तक नहीं पहुँच सका। 'प्रकृतिका प्रभाव इतना कम हृदयगम होता है कि हम सभी कलाकार नहीं हो सकते। चाहिये तो यह कि प्रत्येक दृश्य या स्पर्श हमें पुलकित कर दे।' यह कविका कर्तव्य है कि वह प्रकृतिका सौन्दर्य हमें हृदयंगम करावे। बात यह है कि कविके नेत्र भौतिक पदार्थोंके भीतर तक देखते हैं और वह उस वस्तुका आध्यात्मिक अर्थात आवश्यक और सारपूर्ण सौन्दर्य देखता है। स्थूल पदार्थ तो इस सौन्दर्यका केवल प्रतिरूप है।

कवि कीट्सकी सुन्दर आत्माने क्षण भगुर वस्तुओंमें भी अमरता देखी। वह कहता है :—

सुन्दर वस्तु निरन्तर आनन्ददायिनी होती है ;
उसकी मनमोहकता सदा वढती जाती है ;
उसका अस्तित्व कभी नष्ट नहीं हो सकता ;
वह एक ऐसा कुंज सदा वनाये रखती है
जहाँ हम मधुर स्वप्न देखते हुए
शीतल मद सुगन्ध वायुके झकोरोंमें विश्राम कर सकें।

एक दूसरे कवि लागफेलोकी समझमें गगनमण्डल केवल शून्य आकाश ही नहीं था, वह नक्षत्रोंसे इतना आनन्द प्राप्त करता था जितना दिन-रात नक्षत्रोंके विज्ञानमें मग्न रहनेवाले ज्योतिषियोंको नसीव नहीं हो सकता था। वह कहता है :—

एक-एक करके स्वर्गके अनन्त क्षेत्रमें
उज्ज्वल फूल खिलते हैं,
वे ही अप्सराओंके मनको मुग्ध करते हैं।

महाकवि शेक्सपीयरकी विशाल दृष्टिने ही 'वृक्षोंमें वाणी, पत्थरोंमें पोथियां, नालोंमें नीति और प्रत्येक वस्तुमें कुछ सद्गुण' देखा था।

साधारण व्यक्तिके लिए वसन्तका आना-जाना ऋतुओंके फेरेकी एक साधारण घटना है। परन्तु एक सूक्ष्मदर्शी व्यक्तिके लिये यही वात परिवर्तित या परिवर्तनीय जीवनका प्रतिरूप है। गावोंसे वाहर जानेवाली

गलियोंके दोनों ओरके घेरोंको बहुत कम लोगोंने ध्यानपूर्वक देखा है। परन्तु किसी सूक्ष्मदर्शी व्यक्तिके लिये उस घेरेके एक छोटेसे भाग में भी इतनी मनोहारिता, इतनी स्फूर्ति और इतना सत्य भरा पड़ा है कि वहाँ वह माथा झुकाकर ध्यान मग्न हो जाया करता है। कितने ही व्यक्ति हरे वृक्ष लतादि एवं पुष्पोंसे ढके हुए पर्वतोंपर केवल यात्रा तै करनेके लिये चढ़ते हैं परन्तु कुछ ऐसे भी हैं जिनके लिये 'यह संसारही स्वर्ग है और साधारणसे साधारण सुमनमें भी ईश्वर व्याप्त है। सौन्दर्य-प्रेमीको नित-प्रति गगन-मण्डलमें प्रकाश, छाया और रंगके मनोहर प्रदर्शन दिखाई पड़ते हैं। गहरे-नीले रंगमें कितना गूढ-भाव अन्तर्हित है। हिन्दू-धर्मके माननेवाले भगवानको भी इसी रंगका मानते हैं। श्वेत जलद रजत पर्वतके समान इधर-उधर उड़ते हैं। अपार जलधि अपने कोषमें अमूल्य रत्नोंको छिपाये हुए गरजता रहता है। ऊँचे पर्वत सृष्टिका सौन्दर्य देखनेके लिये गर्दन उठाये खड़े हैं। अरुणोदय एवं सूर्यास्तके समय जब क्षण भरके लिए स्वर्गका द्वार खुलता है और हम उस पारके देशकी झाँकी देखते हैं—शंका रहती है अंधकारके आगमन या प्रस्थानके कारण वह बन्द न हो जाय—तब कौन ऐसा लेखक या चित्रकार है जिसकी क़लम उसका उचित वर्णन कर सके? ऐसे अवसर आते हैं जब इस प्रकारका दृश्य आत्माको इस संसारसे ऊपर उठा देता है; और तब विमल सरोवर, सुनहला मैदान, रक्त-रंजित वन और गगनचुम्बी नील-लोहित पर्वत केवल सध्याके अम्बर डम्बर नहीं रह जाते वरन् वे ही

नन्दनवन है जहाँ हमारे स्वर्गस्थित पूर्वज आनन्द करते हैं। हम कहते हैं कि सूर्य डूब गया और सारी सुषमा अदृश्य हो गई। परन्तु क्या यह बात सच है?

मनुष्यका मस्तिष्क उसके स्थूल शरीर द्वारा ही कार्य करता है। जो कुछ हमने देखा अथवा अनुभव किया है उसका हम केवल अपने स्थूल नेत्रों द्वारा ही निरीक्षण कर सकते हैं। हमारे चारो ओर सौन्दर्य बिखरा पडा है। यह विश्व ही सगीतमय है और प्रकृतिमें सर्वत्र समन्वय है। परन्तु हम उसमेंसे केवल उतनेका ही विचार करते हैं जितनेका हम अपने 'मस्तिष्कके सौन्दर्य' द्वारा ग्रहण और विवेचन करते हैं।

कुछ समय पूर्व मैंने गोमयज नामक घासका अध्ययन प्रारम्भ किया था। इसके पूर्व मैं साधारण छत्रकोंको ही जानती थी। यदि मुझसे कोई पूछता कि गोमयज कितने प्रकारके होते हैं कब और कहाँ उगते हैं तो मैं नहीं बता सकती थी। वास्तवमें मै केवल तीन या चार तरहके गोमयजको जानती थी। मुझे कभी यह सदेह भी नहीं हुआ था कि घूमते समय मै गोमयजके झुण्डके झुण्डको कुचलती चलती हूँ। गोमयजके विषयमें मै जानती ही नहीं थी और इसी कारण मैंने कभी उन्हें देखा भी नहीं था। गोमयजके सम्बन्धमें मेरे नेत्र दृष्टिहीन थे। कुछ ही दिनोंके अध्ययनके पश्चात् मुझे सर्वत्र ही गोमयज दिखाई पड़ने लगे। मेरी एक प्रिय वाटिका थी, जहाँ मै बहुधा जाया करती थी। मैंने वहाँ पर अगणित बार सन्ध्या समय हवाको सरसराते हुए

सुना है ; उस निर्जन वनमें पक्षियों का कलरव मनमोहक था। मै वहांके वन्य कुसुमोंको उठा लाया करती थी। मुझे उनसे विशेष आनन्द मिला करता था। परन्तु उस वाटिकाकी सुन्दर वस्तुओंकी भी मेरे लिए सीमा थी ; केवल हरे वृक्ष, नीला गगन, सुन्दर पक्षी और उनके गायन और वन्य कुसुम। एक दिन सयोगवश मै गोमयज का पाठ पुस्तकमें पढ़कर वहाँ गई। मैंने वहाँ गोमयज की भरमार देखी ; सारी वाटिकामें ये रंगीन पुष्प फैले हुए थे। उस दिन मैं अठारह प्रकारके गोमयज घर लाई। उनमेंसे बहुत से भोज्य थे और कुछ विषाक्त। परन्तु इसके अतिरिक्त रग, और रचनामें वे बहुत उत्कृष्ट थे। कितनोंके गुलाबी रंग गुलाबसे भी अधिक सुन्दर थे। इस उदाहरणका आशय यह है कि हम सौन्दर्यके मध्य रहते हुए भी उसे देख नहीं पाते , इसका कारण यह है कि नेत्र केवल उन्हीं वस्तुओंको देखते हैं जिन्हें मस्तिष्क ढूँढा करता है।

वर्षा ऋतुमें एक दिन घूमते हुए मैं एक सुन्दर स्थानपर पृथ्वीकी ओर मुँह करके लेट गई। मैंने उस स्थानको सौन्दर्यसे आच्छादित पाया। मैंने उसमें जितने प्रकारके सुमन देखे उतने एक स्थानपर इतने समीप मिलने कठिन हैं। उनमें से कुछ तो बालूके एक कणके बराबर थे। वहाँपर कितने प्रकारके शैवाल और कई तरहकी घास थी। सुमन, शैवाल, घास और पृथ्वीकी सम्मिलित सुगन्धि धूपकी सुगन्धिके समान प्रतीत होती थी। मैं इतने छोटे और पददलित स्थानमें इतना सौन्दर्य पाकर आनन्द-विभोर हो गई। थोडी देर और ध्यान-पूर्वक देखनेपर

मुझे ज्ञात हुआ कि वहाँ बस्ती भी है। वहाँ पर अनेक नन्हे-नन्हे कीट रहते थे। कितने छोटे जीवोंके लिये घासकी लम्बी पत्तियाँ उसी प्रकार-की थीं जैसे हमारे लिये बड़े बड़े वृक्ष हैं। वे उनपर चढ़कर इधर उधर देखते थे जैसे हम लोग वृक्षों पर चढ़कर आसपासके देशका अवलोकन करते हैं। कुछ जीव शैवाल या सुमनमें इधर-उधर दौड़ते थे मानों उनका कोई काम न हो या वे मौज उड़ा रहे हों।

यदि हम इस सौन्दर्यसे प्रेम करना और इससे आनन्द प्राप्त करना चाहते हों तो हमें इसे ढूँढना चाहिये।

सोचनेकी बात है कि सौन्दर्य छिपा हुआ क्यों है? खिड़कीपर खड़े होकर ओलोंकी वर्षा देखनेमें भी आनन्द मिलता है जब वे सामने मैदानकी घासमें उज्ज्वल फूलके सदृश फैले हुए होते हैं; या कभी आपने काँटोंकी बाड़पर बर्फ पड़ा हुआ देखा होगा। ऐसा प्रतीत होता है मानो रातको प्रकृतिने किसी महापुरुषके स्वागतार्थ सफेदी पोत दी है। अब आप एक ओले या बर्फके कणको उठाकर सूक्ष्मदर्शी यन्त्र से देखिये। उनकी रचना उच्चकोटिकी है, और प्रत्येक भाग पूर्ण होता है, उसमें किसी प्रकारकी कमी नहीं रहती। वास्तवमें यह जमाया हुआ सौन्दर्य है। प्रत्येक कण अपने सहवासीसे भिन्न गठनका है फिर भी उनमें कोई कुरूप नहीं है।

दुर्गन्धि पूर्ण और सड़े हुए जलका एक बूँद ले लीजिये। उसमें साधारणतया कुछ भी प्रशंसनीय वस्तु नहीं मिलेगी। परन्तु उसी

जलके बिन्दुको शक्तिशाली खुर्दवीनसे देखिये। उसमें आप देखेंगे कि जीवधारियोंकी चहल-पहल मची हुई है। वे जीवधारी किस रग रुपके हैं? वे इतने सुन्दर, बुद्धिमान और रग-विरगे है कि आप आँख मलकर यह सोचने लगेगें कि आप स्वप्न तो नही देख रहे हैं। बहुतसे लोग भौंरेको पास आता देखकर भाग खड़े होंगे। वास्तवमें हम उसके प्रणयको पसन्द करते हुए भी उससे भयभीत रहते हैं। परन्तु उसको पकडकर आप उसे ध्यानपूर्वक देखिये। आप देखेंगे कि जितना सुन्दर उसका वह वस्त्र है जिसको पहनकर वह काम किया करता है—उतना सुन्दर आपका अच्छे से अच्छा वस्त्र भी नहीं है। उसका पीला रग भी निराला है। फिर भी हम उससे घृणा करते हैं।

परन्तु सौन्दर्य इतना छिपा हुआ क्यों है? इसका कारण यही कि इसके लिये हमारी जिज्ञासा बढे और हम बुद्धिमानीसे एकाग्र होकर इसे खोज निकालें। बात यह है कि जितना ही हम जिज्ञासु बनेंगे उतना ही अधिक सौन्दर्य देखनेके हम अधिकारी होंगे। मैं जानती हूँ कि यद्यपि पशु कभी-कभी सूर्यास्तके समय ध्यानावस्थित हो जाते हैं फिरभी न तो वे उस सौन्दर्यको देख ही सकते हैं, और न उनकी बुद्धि इसके ग्रहण करनेमें समर्थ है। यह शक्ति तो केवल मनुष्यको प्राप्त हुई है। मनुष्यने ही पहले पहल सौन्दर्यका स्वाद लिया है। कठिनाई यह है कि हम पहले-पहले प्रकृतिका केवल बाह्य रूप देखते हैं कुछ तो ऐसे हैं जिन्हें वह भी नहीं दिखाई पड़ता। सध्या

समय समुद्रके तटपर अगणित नर-नारी सूर्यको वरुणदेवके विशाल महलमें प्रवेश करते हुए देखते हैं, उस समय सूर्य अपनी अन्तिम किरणोंसे सभी पर्वतमालाओंपर सोनेकी चादर फैला देता है और नील समुद्र लोहित रंग धारण कर लेता है। उन अगणित नर-नारियों-की ओर देखिये। देखिये कि उनमेंसे कितने इस सुन्दर दृश्यको ध्यान-पूर्वक देख रहे हैं। मैं कहती हूँ कि पाँच-सौमें से एक भी उधर नहीं देख रहे हैं। यत्र-तत्र दो-एक स्त्री-पुरुष ध्यानावस्थित होकर अर्चना करते हुए प्रतीत होते हैं। उन्हीं लोगोंके नेत्र सार्थक हैं, उन्हींका ज्ञान सफल है। मैं समझती हूँ कि और लोग भी देख सकते हैं। यह बात तो है नहीं कि नील गगन पर चित्रित सुन्दर चित्र, सुनहली पर्वतमालायें और हरा-भरा मैदान उन लोगोंके लिये भी वैसा ही है जैसा कि जुगाली करती हुई गाय अथवा सिर झुकाकर खडे हुए घोड़ेके लिए।

मनुष्यके मस्तिष्कमें जो बात न घुस सकी अथवा जो बात वह हृदयगम न कर सका उसको वह देख नहीं सकता। उसकी प्रशसा करना तो दूरकी बात है।

ससारमें आज भी उतना ही सौन्दर्य है जितना किसी भी युगमे था या किसी भी युगमे होगा। सौन्दर्य आद्यन्तहीन है, अमर है।

ससार सुन्दर और समन्वय-युक्त है। आवश्यकता इस बातकी है कि मनुष्य अपना हृदय शुद्ध करे, आवश्यकता इस बातकी है कि

वह अपने मस्तिष्कको विकसित करे। धीरे-धीरे उसका मन-मानस प्रकाशमान हो जावेगा और तब मनुष्यका मस्तिष्क इस अमर सौन्दर्यके रूपको ग्रहण कर लेगा। तब तो उसे सर्वत्र ही सौन्दर्य दिखाई पड़ेगा।

कभी-कभी मुझे प्रतीत होता है कि हम सदेह स्वर्गमें पहुँच गये हैं परन्तु हमारे स्थूल नेत्र उस दृश्यको नहीं देख पाते। नक्षत्रगण अभी भी स्वर्गीय गायन गाते हैं परन्तु हम इतने बहरे हो गये हैं कि उसे सुन नहीं सकते।

ऐसे मनुष्य हैं जिन्हें दिव्य ज्ञान और अलौकिक इन्द्रियाँ उपलब्ध हो गई हैं। वे इन नक्षत्रोंका गायन सुनते हैं। एकबार जिन्होंने वह संगीत सुना है वे सदा सुनते रहते हैं, परन्तु यदि हम न सुन सकें तो इसका यह अर्थ नहीं है कि विश्व-संगीत बन्द हो जाता है।

हम कहते हैं कि देवता और अप्सरायें दूसरे लोकमें रहती हैं और हमारा विश्वास है कि किसी दिन हम उनका दर्शन करेंगे। यदि हमारे पास भी वैसे ही दिव्य हृदय और नेत्र होते तो हम जानते कि हम यत्र-तत्र-सर्वत्र उनको देख रहे हैं, उनके समीप रहते हैं और इस कष्टमय संसार-में वे सदा हमारे सहयोगी हैं। हम उन्हें इस कारण नहीं देख पाते हैं कि हम उनको देखने की चेष्टा नहीं करते और हमारा यह भी विश्वास है कि वे यहाँ रहते ही नहीं हैं। जब कोई व्यक्ति कहता है कि 'हमें देवदर्शन हुआ है' तब हम कहते हैं कि 'वह झूठ बोलता है' और इसके

प्रमाणमें हम वर्तमान पत्र-पत्रिकाओंका उद्धरण देते हैं। हम इस विषयपर पत्र, लेख और पुस्तकें लिखते हैं कि मनुष्यके लिए देव-दर्शन कितना असम्भव है!

हमें विश्वास करना चाहिये और विश्वास करके इधर-उधर ध्यान-पूर्वक सौंदर्य ढूँढना चाहिये और फिर निश्चय-पूर्वक हम सौन्दर्य-दर्शन करेंगे।

प्रकृति

"वह किसी सम्प्रदायका भक्त नहीं है, किसी निजी पंथका प्रवर्तक भी नहीं है, वरन् प्रकृतिके परदेके भीतर प्रकृतिके परमेश्वरको देखता है।" —पोप

ऐ प्रकृतिसे दूर रहनेवालो! अपने कुटिल महलोंसे बाहर आकर प्रकृतिका संगीत सुनो, उसके सौन्दर्यको देखो, उसके मधुर मधुको पी जाओ और तब तुम समझोगे कि उसकी सभी सम्पति और वह स्वयं तुम्हारी है और उसकी रचना ही तुम्हारे लिये हुई है।

'जिसने प्रकृतिसे प्रेम किया उसके मनके साथ प्रकृतिने कभी विश्वासघात नही किया।'

अत: प्रकृतिके भावसे सहानुभूति करिये, उसकी ऋतु-परिवर्तन-क्रियाको ध्यानपूर्वक देखिये; उसके प्रत्येक पहलूपर प्रतिदिन विचार करिये और इस प्रकार वह आपके मनमें 'सत्य शिव सुन्दरम्' का प्रेम जाग्रत कर देगी।

कभी घासके मैदानमें जाकर आकाशकी ओर दृष्टि करके लेट जाइये। उस समय आपको भारद्वाज पक्षी आकाशमें गीत गाता हुआ दिखाई पड़ेगा और श्वेत जलद समूह आकाशमें यत्र-तत्र उड़ते और पृथ्वीपर चलती-फिरती छायाका दृश्य उपस्थित करते हैं, (क्या आपने कभी इस दौडती हुई छायाके दृश्यका आनन्द नही लूटा है?) आप उस समय देखेंगे कि नील गगन अनादि है, अनन्त है। क्या कभी आपने स्थूल जगत्के दृश्यसे नेत्र बन्द करके प्रकृतिके गूढतम भावको देखनेका प्रयत्न किया है? उसमें अनेक रहस्य छिपे हुए हैं जो वह आपको बताना चाहती है। आवश्यकता इस बातकी है कि आप उसके नेत्रोंकी ओर टकटकी लगाकर देखिये, उसके मनमें प्रवेश-कर जाइये। इसी प्रकार उसे प्राप्त किया जा सकता है। प्रेमी अपने प्रेमके प्रतिदानके लिये केवल एक दिशामें देखता है, वह दिशा उसकी प्रेमिकाके अथाह नेत्र हैं। इसी प्रकार यदि आप प्रकृतिके अथाह नेत्रोंमें प्रवेश कर जावें तो आप उसके मनमानसमे प्रवेश कर लेंगे और तब

वह आन्तरिक जीवनको स्फूर्ति प्रदान करेगी ; वह आपके हृदयको शक्तिकेन्द्र बना देगी , और वह आपका उन वस्तुओंसे परिचय करावेगी, जिनका आपने कभी स्वप्न भी नहीं देखा था ।

यदि आप क्षमा करें तो मैं आपको बताऊँगी कि मैंने प्रकृतिसे कितनी स्फूर्ति प्राप्त की है । आपको उन बातोंको सुनकर आश्चर्य होगा जो प्रकृतिने अपने एक भक्तके लिये किया है । मैंने नक्षत्राच्छादित शून्य आकाशमें सत्य और सुन्दर देखा है । मैंने बालूके टीलेपर लेटकर आकाशको ध्यान-पूर्वक देखा है । मैंने उस समय ऐसे दृश्य और स्वप्न देखे हैं जिनके देखनेकी मुझे सम्भावना नहीं थी । मैंने प्रकृतिके धड़कते हुए हृदयमें प्रवेश करके देखा है । उस समय मैंने अपने हृदयको भी धड़कते हुए पाया, मानो जीवन स्फूर्तिदायक है और उसी समय मुझे पता चला कि मैं प्रकृतिमें मिल गई हूँ । उस अवसरपर मैंने अनेक ग्रहोंका संगीत सुना है और उसी समय यह भी मेरी समझमें आया कि विश्व नित्य-सुन्दर है । मैंने वनोंकी ओर टकटकी लगाकर देखा है और मैं आनन्द-विभोर होगई हूँ । वृक्ष अपने सुन्दर वितान एक साथ मिलाकर मेरे रक्षक बन गये , उन्होंने अपनी हरी पत्तियों और फूल एवं फलोंसे मेरा स्वागत किया । मेरे मनमें उनके प्रति श्रद्धा और भक्तिका भाव उमड़ा । मेरा विश्वास है कि उस प्रकारकी श्रद्धा और भक्ति सुन्दरसे सुन्दर मन्दिर, मसजिद और गिरजाघरोंमें भी नहीं उत्पन्न होगी जो कि प्रकृतिके इन हरे रंगके निर्जन वनोंमें होती है । संसारके महान

पुरुषोंको सर्वश्रेष्ठ शान्ति और भक्तिका वरदान इन वनोंमें ही मिला करता है।

ब्रिस्टल चैनलमें जब कभी मैं एटलांटिक महासागरकी टूटी हुई श्वेत लहरोंको झागके साथ आगे बढते देखती हूँ तब हृदय आनन्दातिरेक से भर जाता है। जब कभी मैं डेवन की ऊँची और जगली चट्टानोंपर घूमती हूँ उस समय मेरा हृदय साहस, उच्च प्रयत्नशीलता और उत्साहसे भर जाता है। ऐसी दशामें मैं अपनेको अनन्तके अतिसमीप पाती हूँ। प्रकृतिके निकट सम्पर्क में आनेपर ही हमें पता लगता है कि वह हमको कितना स्फूर्ति प्रदान कर सकती है। जब कभी हम उसके सम्पर्क में आते हैं तब हमारी दशा उन थके हुए बच्चोंके समान होती है जो माताके स्तनसे चिपट जाया करते हैं और उसकी गोदमें ओज और स्वतन्त्रताका पुनर्जन्म होता है।

क्या आपने वृक्ष लतादिसे प्रेमका पाठ सीखा है? क्या आपने एकान्तवासी पर्वतों और गम्भीर एव शान्त रहनेवाली घाटियोंसे प्रेम करना सीखा है? क्या आपने वृक्षोंके झूमते समय प्रेम-सगीत सुना है? पक्षियोंके कलरव, नदियोंके कलकल और शस्य-सग्रहके समय लहराते हुए सुनहले अन्न की जबानी 'प्रेम'की प्रशंसा क्या आपने नहीं सुनी है?

यदि आपने नहीं सुनी है, तो आपने सात्विक प्रेमका आभास भी प्राप्त नहीं किया है, आपने उसके आनन्द-विभोर करनेवाले गुणका एक कण भी प्राप्त नहीं किया है।

क्या आप चाहते हैं कि आप न तो वृद्ध हो और न आपका सौन्दर्य नाश हो ? यदि हाँ, तो आपको प्रकृतिके हृदयके समीप पहुँचना पड़ेगा। उसके मन्दिरमें उस चालाक वैरीकी कथा नहीं सुनाई जाती जो अवयवोंको निर्बल और मस्तिष्कको थोदा बनाता एवं हाथोंको कँपाने लगता है। यह कथा तो सजे हुए प्रासादो, सुवर्णजटित महलों, नाट्यशालाओं और वेश्यागृहोंमें सुनाई जाती है। प्रकृति हमें नवीनताप्राप्त और नवीनताकारक युवावस्थाकी कथा सुनाती है, उसकी प्रफुल्लता अमर है, उसके कपोलोंकी लालिमा अमिट है, उसके केश कभी श्वेत न होनेवाले हैं; उसकी यह भी इच्छा नहीं है कि उसका कोई अंग नाशको प्राप्त हो और वह किन्नरियो या संगीत-देवीकी कन्याओंको पदच्युत न होने देगी। क्या आप नाशोन्मुखी निद्राको तोड़ना चाहते हैं ? यदि हाँ, तो आपको प्रकृतिकी गोदमें जाकर उससे स्फूर्ति प्राप्त करनी होगी। उसके रहस्योंको पहचानिये और उस सुन्दरताकी मूर्तिका गाढालिंगन करिये, तब वह आपको अनन्त-यौवन और अमरलावण्यका रहस्य बतला देगी।

प्रकृतिके आनन्दसे कभी अतितुष्टि नहीं हो सकती, उसके उल्लाससे कभी अरुचि नहीं उत्पन्न हो सकती, और उसके प्रेमका न तो कभी परिवर्तन होगा, न वह कभी क्षीण होगा और न कभी पृथक करेगा। वह तो शाश्वत प्रेमी है। वह उन सभी लोगोंके हृदयोंको स्फूर्ति प्रदान कर सकती है जो उसके प्रेमी हैं। परन्तु उसके समीप अपरिचित की

भाँति न जाइये। हमें उसको दिन-रात—निरन्तर ढूँढना चाहिये कारण यह है कि वह भी हृदयको दृढ करने और साहसी होनेके लिये निरन्तर स्फूर्ति देती रहती है एवं जीवनको सौन्दर्य-पूर्ण बनाया करती है।

प्रकृतिके प्रेमीके लिए वसन्तका आगमन कितना स्फूर्तिदायक होता है! हम जानते हैं कि यद्यपि वृद्ध शीत-ऋतु अधिक समय तक शासनाधिकार अपने हाथमे रखना चाहेगा परन्तु एक बलशाली युवक इस दुष्टको पदच्युत करने आ रहा है। कोयल उसका समाचार लेकर आ गई है। उसके स्वागतके लिये प्रकृतिने शीत राजाकी आज्ञा-का विद्रोह करनेकी तैयारी की है। शीत पागल होकर इधर-उधर दौड़ता है, सबको ताडना देना चाहता है। परन्तु उसकी सारी प्रजा विद्रोही बन जाती है, रसालके कोमल किसलय निकलते हैं, पौधोमे नये फूल आते हैं, पृथ्वीमें छिपे हुए जीव बाहर निकलते हैं, सरसों खेती को पीली साडी पहनाती है, चराचर उसकी प्रतीक्षामे उत्सुक है। क्या इस क्रान्तिका दृश्य स्फुरणकारी नहीं है?

यदि हमारे मनमें यह देखनेकी इच्छा हो तो हमारा हृदय आनन्दो-ल्लाससे भर जावेगा। हमारे चारो ओर सात्विक सौन्दर्य बिखरा पड़ा है। यही वह सौन्दर्य है जो अपने गुण ग्राहकोंके जीवनको स्फूर्ति प्रदान करता है। वसन्तके आगमनके समय क्या होता है? कलियाँ खिलने-के लिये उत्सुक रहती हैं, उन्हें शका होती है कि कही ऋतुराजकी सवारी निकल जाय और वे उनका दर्शनभी न कर सकें, कोंपल वृक्षोंकी

मोटी शाखाओंमेंसे भी निकल पड़ती है, और नये प्रकारकी घास पृथ्वी और चट्टानमें यत्र-तत्र फूट निकलती है। सबको वही शंका होती है। वे हमें यह स्मरण दिलाती हैं कि हम चिर अभिलषित आनन्दकी प्राप्तिके लिये समयके पूर्वही उत्सुक हो उठते हैं। हम लोग अबोध शिशुओंकी भाँति जीवनका अनुपम फल परिपक्व होनेके पूर्वही तोड़ लेना चाहते हैं। हमें कोमल किसलयोंसे धैर्यका पाठ सीखना चाहिये क्योंकि उन्हें कोयलकी प्रथम कूक सुनने तक कठोर काठके भीतर बन्द रहना पड़ता है; सरसों अपनी पीली चादर भी उसी समय फैलाती है।

कोयलकी कूकमें क्या सदेश होता है ? उसकी कूक मनको क्यों मस्त बना देती है ? सरसों क्या समाचार लेकर आई है ? फूली सरसोंको और देखनेको मन क्यों ललचाता है ? यही रहस्य प्रकृति-प्रेमसे प्रकट होता है। इसी रहस्यमें उनकी स्फूर्तिदायिनी शक्ति और आनन्द छिपा है। वे हमें प्रतीक्षा करनेका आदेश करते हैं, यदि ऐसा न होता तो शीत केवल अपनी दुःखपूर्ण स्मृति छोड़ जाता। परन्तु सदासे ऐसा होता आया है और सदा ऐसा होता रहेगा। रात्रिके अंधकारको दूर करनेके लिये सवेरे सदा सूर्योदय होगा और शीतकी पीड़ा दूर करनेके लिए सदा वसन्तका आगमन होगा।

इसी प्रकार प्रत्येक ऋतुमें सौन्दर्य भरा हुआ है और प्रकृतिके प्रेमियोंके लिये प्रत्येक प्रकारके सौन्दर्यमें स्फूर्ति है।

रंग

जीवन, रंग-बिरंगे कांच बुर्जके समान अनन्तके श्वेत प्रकाशको रञ्जित करता है। मैं पूछती हूं कि कौन ऐसा है जिसने कभी भी किसी सुन्दर रङ्गसे स्फूर्ति प्राप्त नहीं की है। सन्ध्याकी श्रेष्ठ रङ्गसाज़ी कविके लिये कभी-कभी एकमात्र स्फूर्तिका साधन रही है और कौन जानता है कि प्रात.कालका अरुण सूर्य या पर्वतोंकी नीलिमाने कितनी आनन्दपूरित करनेवाले सगीतकी सृष्टिकी है। मुझे तो रंगोंने बहुधा मोहित किया है। और उनकी मोहिनी शक्ति मेरी अवस्थाके साथ बढ़ती गई है और वे आज जितने मोहक प्रतीत होते हैं उतने

पहले कभी नहीं प्रतीत हुए। वास्तवमें मैं रङ्गोंके द्वारा ही विचार करती हूं।

जब मैं बहुत छोटी अवस्थामें बाइबिल पढा करती तो मेरी समझमें यह नहीं आता कि नये येरुसलेमकी दीवारोंमें लगे बारह रत्नोंके क्या आशय हैं और मैं अपने मित्रों और अध्यापकोंसे पूछती कि सेण्ट जानका इससे क्या अर्थ था ? और ईसाका पत्थरोंका रूप देनेका क्या अर्थ है ? सिंहासनके चारो ओरवाली इन्द्रधनुप हीरेके समान क्यों है ? स्त्रीको लाल और बेगनी रङ्गका वस्त्र क्यों पहनाया गया है ? और नागराज लाल रङ्गके क्यों हैं ?

मुझसे बहुधा यही कहा जाता था कि छोटी लड़कियोंको ऐसे सवाल नहीं पूछने चाहिये ; और जो कुछ बाइबिलमें लिखा है उसपर विश्वास करना चाहिये ; तथा सेण्ट जानने उन सब वस्तुओंको वास्तवमें देखा था जिन्हें वे देखी हुई बताते हैं—न तो कम और न अधिक। इस उत्तरको सुनकर मैं मुसकरा देती। परन्तु जब कभी कोई ऐसा व्यक्ति मिलता जिसे मैं समझती कि वह मेरे प्रश्नोंका उत्तर दे सकता है तो मैं सदा इन शङ्काओंको उसके सामने प्रकट करती रहती।

कई वर्ष बीत गये परन्तु मेरी शका बनी रही यद्यपि मेरे मनमें इस दृढ भावनाने घर कर लिया था कि इनका सम्बन्ध किसी-न-किसी रगसे अवश्य होगा। हाँ, मैं यह नहीं समझ सकती थी कि वह सम्बन्ध है किस प्रकारका। एक दिन मैं शेली कविकी पुस्तक पढ़ रही थी और

'एडोनेस' नामक परिच्छेदकी श्रेष्ठ कविताओंका बड़ी देर तक मनन करती रही, विशेषत. उन पक्तियोंपर जो इस अध्यायके प्रारम्भमे उद्धृत की गई हैं। 'रग-बिरगे कांचके बुर्जके' सम्बन्धमे मनन करती हुई मैं सो गई। सोते समय मैंने एक विचित्र स्वप्न देखा। उस स्वप्नने मेरे जीवनको महान स्फूर्ति प्रदान की है। प्रिय पाठको, आप भी उस स्फूर्तिको प्राप्त कर सकते हैं जो विचित्र रगोंके देखनेसे मैं प्राप्त किया करती हूँ।

स्वप्नमें मैंने देखा कि मैं इस विशाल ससारके एक किनारे खडी हूँ। परन्तु यह ससार मुझे रग-बिरगे कांचके बुर्जके समान प्रतीत हुआ। बुर्जके केन्द्रमे सभी रग मिलकर एक सुन्दर उज्ज्वल तारेके रूपमे बदल गये थे। वह बुर्ज एक वडे पखेके समान वृत्तके रूपमें फैला हुआ था और मैंने ध्यानसे देखा कि बुर्जके आधारके पास, जहाँ उसके एक-एक भाग बहुत चौड़े थे, रग गहरे हो गये हैं परन्तु ज्यों-ज्यों ऊपरको वे तारेकी ओर बढते गये हैं त्यों-त्यों वे अधिक सुन्दर, चमकीले और पवित्र होते गये हैं। तारेके पास पहुँचकर वे फीके परन्तु बहुत शानदार हो गये हैं और वहाँ पर उनसे दैवी आभा प्रस्फुटित हो रही है।

मैंने बुर्जके नीचे दुनियाके मनुष्योंको घूमते हुए भी देखा। परन्तु मैंने वहाँ यह भी देखा कि अधिकाश लोग एक भाग या रगके बाहर नहीं निकल पाते। उनके सारे वस्त्र, उनका कथन और उनका काम सब कुछ उस भागके कांच द्वारा रजित है जहाँ वे रहते हैं। कभी-कभी

कोई व्यक्ति या स्त्री एक भागसे निकलकर दूसरे भागमें जाते हैं और जब कभी वे ऐसा करते हैं उनका रग बदल जाता है। मैंने देखा कि वे कुछ बेचैनीके कारण कभी इस रगके नीचे कभी उस रगके नीचे दौड़ रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि घनीभूत रगोंके नीचे सभी बेचैन और शकित थे। कोई शात नहीं था, शाति तो वहाँ थी ही नहीं। तब मैं उन रगोंको अधिक ध्यान-पूर्वक देखने लगी। लाल रंग बुर्जके आधार में काले-लाल रंगका होगया था। कुछ ऊपर उठनेपर गहरे रक्तके रंग-का था; और अधिक ऊँचा उठनेपर सुन्दर और मोहक हल्का लाल और तब उससे भी ऊपर सन्ध्याकी शानदार लालीका रग शोभा दे रहा था। यहाँ तक उज्वल तारेके पास पहुँचते-पहुँचते वह गुलाबी लाल रगका हो गया था। आधारके पास हरा रग अस्पष्ट और गँदला प्रतीत होता था, कहीं पर थोड़ा-सा भूरापन था, कहीं पर मटमैला, पीला और ऊपर-की ओर अधिक निर्मल होते-होते तारेमें मिल गया था। कहीं-कहीं वसन्तकी नवल हरियालीके समान और कहीं वर्षाके घासकी हरियालीके समान। यहाँ तक कि तारेमें मिलते समय सन्ध्याके आकाशके समान कभी-कभी दिखाई देनेवाली पीलेपनके सदृश प्रतीत होती थी।

मैंने मनमें सोचा, 'इसका अर्थ क्या है?' मैंने ध्यान-पूर्वक देखकर अलग बैठकर मनन करना प्रारम्भ किया। तब मैंने सोचा, 'यदि मैं भूल नहीं कर रही हूँ तो नये येरुसलेमके आधारमें लगे बारह बहुमूल्य पत्थरोंका आशय अब समझमें आ जावेगा।'

तब मैंने देखा कि मनुष्योंके विचार और कार्य ठीक उस रंगके अनुसार थे जहाँ वे रहते थे। उदाहरणत: मैंने देखा कि एक व्यक्ति भयंकर क्रोधकी मूर्ति बना हुआ अपने एक साथीके पीछे हाथमें कटार छिपाये आक्रमणके लिये तैयार खडा है। वह उस स्थान पर खड़ा तो थाही जो काले लाल रंगका था साथ ही उसका सारा शरीर उसी रंगसे रंगा हुआ था और उसके आस-पास काले नाग लिपटे थे जिनके नेत्र अग्निमय थे। उससे अधिक वीभत्स अथवा भद्दा दृश्य मैंने पहले नहीं देखा था और मैंने भयके कारण काँपकर अपने नेत्र मूँद लिये। तब मैंने कहा, 'हे भगवान यदि क्रोधका यही रूप है तो मैं फिर कभी क्रोधित न होऊँ।'

तब मैंने उन लोगोंको देखा जिनका सारा शरीर नीचतम वासनाओंमें डूबा हुआ था परन्तु मै यह न जान सकी कि वे पुरुष थे या स्त्री। वे लाल काँचके उस भागके नीचे घूम रहे थे जो गहरे रक्तके रंगका था और कभी कभी वे गहरे बैगनी रंगके नीचे घूमते जहाँ कि वह पर्याप्त चटकीला था। उसी समय मुझे उस लाल स्त्रीका ध्यान आया जिसका वर्णन हमारी धर्मपुस्तकोंमें है और जो एक ऋतुमें तो पापमें ही लिप्त रहती और मैं यह भी जानती थी कि किस प्रकार क्षुद्र वासनायें आत्माको कलंकित करती हैं। जहाँ पर लाल रंग सुन्दर और शानदार था वहांके स्त्री-पुरुष सुन्दर स्वस्थ और शक्तिपूर्ण प्रतीत होते थे, ऐसा प्रतीत होता था मानो उनके शरीरसे जीवनीशक्ति फूटकर चारो ओर छिटक रही हो।

मैंने अपने स्वप्नमें एक चित्र देखा जो मैं कभी नहीं भूल सकती। उससे प्राप्त की हुई स्फूर्ति आज भी उतनी ही उत्साह-वर्धक बनी हुई है जितनी उस समय थी। यह एक सुन्दर महिला का चित्र था जो अपने किसी प्रियजनके पास प्रेम, सहानुभूति, आर्द्रता और रक्षाका संदेश भेज रही थी। वह खड़ी थी और उसके हाथ उसकी छातीपर प्रार्थनाके रूपमें जुड़े हुए थे। वह ऊपर मुँह किये खड़ी थी। वह ऐसे स्थानपर थी जहाँ गुलाबी लाल सबसे अधिक सुन्दर शानदार और निर्मल था और उज्ज्वल तारेके बहुत समीप था। उसके वस्त्रोंसे तो गुलाबी लाल रंगकी आभा निकल ही रही थी, परन्तु उसके वदन और वास्तवमें उसके सारे शरीरसे जो प्रकाश प्रस्फुटित हो रहा था वह इतना सुन्दर था कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। मैं इस सुन्दर दृश्यको मंत्रमुग्ध होकर देखती रही; एकाएक मैंने देखा कि उसके ललाटसे एक गुलाबी लालरंगका तीर निकलकर उस महिलाके प्रिय व्यक्तिकी ओर चला और वह ज्यों ज्यों लक्ष्यके समीप पहुँचता जाता था, त्यों-त्यों विस्तृत और अधिक सुन्दर होता जाता था'। पास पहुँच जाने पर वह गुलाबी छत्रकी भाँति उसके मस्तक पर शोभा देने लगा। तब मैंने देखा कि वह व्यक्ति तनकर खड़ा हो गया और अपने नेत्रोंसे उपरकी ओर किसी अदृश्य वस्तुको देखने लगा। मैंने यह भी देखा कि उसकी आत्मा उच्चादर्शके लिये महत्प्रयत्न कर रही है। मैंने आनन्द-विभोर होकर कहा, 'वह भगवानके सदृश ही विशालकाय है उसका वदन शक्ति-शाली देवक

वदनके समान है और सभी पुरुष उसको देखकर चकित हैं। मैंने पुन. उस महिलाकी ओर मुड़ कर देखा, फिर उस गुलाबी छत्रकी ओर।

वहाँ मैंने देखा कि जो माताएँ अपने-अपने शिशुओंको अपनी छातीसे सटाये हुए थीं वे गुलावी रगके नीचे थीं; जब वे अपने शिशुओं-की ओर निहारतीं तो उनके मुख कितने सुन्दर दिखाई देते! मेरी यह अभिलाषा थी कि वे सदा उन्हींकी ओर देखा करें परन्तु खेद था कि कितनी ही शिशुओंसे पृथक अन्य रगोंके नीचे घूम रही थीं, कुछ तो गुलावी लाल और उज्ज्वल तारेसे बहुत दूर थीं।

मैने देखा कि कितने ही स्त्री-पुरुष अपने साथ पुस्तकों का ढेर लिये हुए हैं और मैं जानती थी कि वे दुनियाकी कमाईका भाण्डार लिये हैं। वे बुर्जके उस भागके नीचे घूम रहे थे, जहाँपर नारङ्गी रङ्ग था। पीले रङ्गके नीचे महात्मा और सन्तलोग विराजमान थे। और मुझे स्मरण हो आया कि किसीने कहा है, 'पीला रङ्ग बुद्धि और ज्ञानका चिन्ह है।' कुछ लोग ऐसे भी थे जो बुर्जके एक भागसे दूसरे भागमें विचर रहे थे। परन्तु वे उज्ज्वल तारेके नीचे एक वृत्त-में सदा बने रहते थे। वे ध्यान-मग्न होकर हलके नीले रगसे रञ्जित प्रतीत होते थे। जब उनका हृदय दुनियाकी दशा देखकर व्यथित होता तो ऐसा प्रतीत होता मानो उनपर गुलाबी लाल रङ्गकी सुन्दर किरणोंकी वर्षा हो रही हो। जब दयासे आर्द्र होकर वे कष्ट-निवारण

के लिये अग्रसर होते तो हलका पीला और अति हलका हरा रङ्ग एकमें मिला हुआ प्रतीत होता। परन्तु जब वे उज्ज्वल तारेकी ओर ध्यान-मग्न होकर देखते तब उनपर पीले बैजनी रङ्गकी स्वच्छ किरणोंकी वर्षा होती रहती। उनके शरीरसे जो आलोक प्रस्फुटित होता वह सारे बुर्ज-के नीचे फैला रहता ; फिर वह उनका एक प्रमुख भाग बना रहता। वे इतने सुन्दर थे कि न तो मैंने कभी वैसा सौन्दर्य-दर्शन ही किया और न कभी उसकी कल्पना ही की।

अपने स्वप्नमें मैंने देखा कि युवक सुन्दर हरे रंगको पसन्द करता है। कारण यह था कि हरा रंग नवजीवनका प्रतिनिधि है ; उसमें जीवनका परिपूर्ण और शक्तिका असीम स्रोत है। मैंने देखा कि स्वस्थ मनुष्य शानदार नारंगी रंगके नीचे घूम रहे हैं। मैंने यह भी देखा कि सांसारिक सत्ता और शानवाले श्रेष्ठ बैजनी रंगको पसन्द करते हैं तथा तपस्वी ऋषि लोग पीले बैजनी रंगसे सुशोभित थे। मैंने देखा कि दुःख, पीड़ा, चिन्ता और निराशासे पीड़ित मनुष्य उन रंगोंके नीचे घूम रहे थे जहांके रंग गन्दे, धब्बेदार और जीवनहीन थे ; अतः मैंने उधरसे मुँह फेर लिया और फिर उन लोगोंकी ओर देखा जो उज्ज्वल तारेके नीचे शुद्ध और निर्मल रंगोंके नीचे विचर रहे थे। मैं तो उस स्त्रीके समीप पहुँचना चाहती थी जो अपने प्रेमीके पास गुलाबी किरणोंका आलोक भेज रही थी। मैं उससे उसी प्रकार प्रेम करना सीखना चाहती थी। मैंने उसकी ओर अपनी भुजाएँ फैलाकर कहा, 'मैं आ रही हूं।

मैं आ रही हूँ।' मैं आगे बढने ही वाली थी कि किसीके वलिष्ट हाथोंने मुझे पीछे खींचा और मुझसे किसीने कहा, 'क्या तुम इतनी पवित्र हो कि इस उज्ज्वल तारेके समीप जाओ।'

तब मैंने उज्ज्वल तारेकी ओर देखा और मैंने देखा कि उसपर लिखा है, 'जो कोई यहाँ आनेका प्रबल प्रयत्न करता है मे उसको एक श्वेत रत्न देता हूँ और उसपर एक नया नाम अंकित रहता है।'

मैं जग गई परन्तु मेरी भुजायें अभी भी गुलावी रंगकी ओर फैली हुई थीं, उनके पास न पहुँचने की व्यथाके कारण नेत्र अश्रुवर्षा कर रहे थे।

उसी दिनसे जीवन ही मुझे रग पूर्ण प्रतीत होता है और सभी रगोसे मुझे स्फूर्ति मिलती है। अब यह कहनेकी आवश्यकता नहीं रही कि उस दिनके वाद नये थेरुसलेमकी नींवके पत्थरोंके वारेमें मैंने पुनः शंका नहीं की। मै यह जान गई कि सबसे नीचेवाला पत्थर क्यों काले लाल रगका था और सबसे ऊपरवाला पीले बैजनी रगका। तब मुझे यह ज्ञात हो गया कि पीडित ईसा जैस्वर पत्थरके समान थे और सिंहासनके चारों ओरवाली इन्द्रधनुष हीरेके समान थी। यही तो पीडा और जीवनका समन्वय था।

तब मैंने रगोके अपने ऊपर पड़नेवाले प्रभावका अध्ययन किया। मैंने देखा कि काला रग मनकी सारी प्रसन्नताओं और आशाओंके लिये काल-स्वरूप है और तभीसे मैंने काले रगका सदाके लिये वहिष्कार

कर दिया है। जब मेरे प्राणप्यारेका स्वर्गारोहण हो गया तब मैंने सुन्दर और निर्मल बैजनीरंगके वस्त्र पहने थे। ये रग मेरे हृदयसे मृत्यु और कब्रकी विजय-गाथाका वर्णन करते थे तथा स्वर्गका सदेश मेरे पास पहुँचाते।

हरे रंगसे वसंतवाली स्फूर्ति प्राप्त होती है, नवजीवनका संचार होता है और शक्तिका अक्षय भाण्डार प्राप्त हो जाता है।

हलका नीला रग सत्यका गुण गाता है और गुलाबी लाली तो उसी दिनसे पहनने में प्रिय ही नहीं रही है वरन् मुझे सदा विशिष्टतम, निर्मलतम और अत्यधिक निष्काम प्रेम और सेवाकी स्मृति दिलाती रहती है।

हम सभी लोगों पर रगोंका कुछ न कुछ प्रभाव पड़ता ही रहता है। हमारे देशमें जिस दिन हमें कोई बात अच्छी नहीं लगती और हम उदास रहते हैं तो हम कहते हैं, 'आज बड़ा भूरा दिन है।' जीवनके किसी महान दिवसको हम 'रक्त दिवस' कहा करते हैं जिस दिन हमें कोई बडी प्रसन्नता प्राप्त होती है उस दिनको हम 'नीला दिवस' कहते हैं। हम लोग नीलिमाको भयानक मानते हैं। यह बात ठीक है। परन्तु यह भी सत्य है कि उस बुर्जके आधारके पास काला और मटमैला नीला रग था और यह रग ठीक हलके-नीलेके सामने था जो सत्य और श्रद्धाकी प्रतिमा है। प्रत्येक वस्तुके दो पहलू होते हैं। मैंने देखा था कि गुलाबी लाल जो कि जीवनकी सर्व-

श्रेष्ठ स्थिति है—बुर्जके आधारमें कुवासनाओंकी प्रतिमा गहरे लाल रंगका रुप धारण किये हुए है। विना अथक और घोर परिश्रम किये आत्माको अनेक शरीर धारण करना पड़ता है, ठीक उसी तरह जैसे गहरा लाल ऊपर जाकर गुलाबी लाल हो जाता है।

पुराने जमानेमें लोग अपने शरीर और वस्त्रोंपर रत्न धारण किया करते थे। वे शृंगारके लिए ऐसा नहीं करते थे, वे ऐसा आध्यात्मिक-सत्यका रूप दिखानेके लिए ऐसा करते थे। इसीलिए सेण्ट जानने सुन्दर अन्योक्ति-कथामे रत्नोंका वर्णन किया है।

पाठको, हमें इस विचित्र रंगोंवाले काचके बुर्जके नीचे अपना अपना स्थान खोजना होगा। यदि हम चतुर होंगे तो हम सदा जीवनप्रद, जीवनको स्फूर्तिप्रद और प्रत्यक्ष रंगोंको पसंद करेंगे। हम सदा उन रंगोंसे दूर रहेंगे जो काले और गदले होंगे जिन्हें देखते समय घृणा होती है और जो हृदयको कभी प्रेम करने या सत्य और सौन्दर्यकी खोजके लिए प्रेरित नहीं करते।

अब बताइये कि कोई ऐसा भी कारण है जिससे हम अपने घरों, वस्त्रों और आसपासकी वस्तुओं में सबसे अधिक स्फूर्तिदायक वस्तुओंको प्राप्त नहीं करना चाहिये? हमें अतिसुन्दर रंगोंसे श्रेष्टतम स्फूर्ति प्राप्त करनी चाहिये।

सौहार्द

'ऐ सुहृद, केवल तुम्हारी प्रेरणासे इस विस्तृत नीलगगनने वृत्तका रूप धारण किया है, और केवल तुम्हारे कारण गुलाबका गुलाबी रंग है। अकेले तुम्हारे कारण प्रत्येक वस्तु अधिक विशिष्ट हो जाती है और अलौकिक प्रतीत होती है। हमारे भाग्यका चक्र तुम्हारे तेजके कारण प्रकाशपूर्ण है। तुम्हारी विशिष्टताने मुझे भी अपने नैराश्यपर शासन करनेके योग्य बना दिया है, मेरे अदृश्य जीवनका स्रोत तुम्हारे सौहार्दके कारण अधिक निर्मल हो गया है।'

—इमर्सन

जीवनकी सबसे बड़ी स्फूर्तियोंमेंसे एक उस सुन्दर शब्दमें निहित है जिसे हम 'सौहार्द' कहते हैं। मुझे इसका पूरा अनुभव है कि हृदय एक ऐसे व्यक्ति—आत्माके—लिए लालायित रहता है जिसे हम 'मेरेसुहृद' कहकर सम्बोधित करना चाहते हैं।

क्या कारण है कि सौहार्द केवल एकांगी वस्तु रह गई है? निश्चित बात तो यह है कि विशिष्टतम, और इसी कारण, प्राकृतिक सौहार्द वही है जो एक पुरुष और स्त्रीके बीच होता है। परन्तु आजकी दशा क्या है? हमारा आदर्श बहुत असत्य है, हमारा सन्देह निर्दय है, हमारी रीतियाँ और सामाजिक बन्धन दासतापूर्ण हैं। इसी कारण किसी स्त्री और पुरुषका सौहार्द तथा प्रेम असम्भव हो गया है। हम कभी किसी स्त्री और पुरुषको एक साथ देखकर सशंकित हो उठते हैं। मधुरतम और पवित्र व्यक्ति भी सामाजिक रीतियों और बन्धनोंकी पुष्ट शृंखलाओंमें जकड़े हुए हैं। बहुत कम लोग ऐसे हैं जो उनको तोडकर सामाजिक कोतवालोंसे निर्भय रहकर विचरते हैं। यदि किसी स्त्रीका कोई पुरुषार्थी पुरुष सुहृद है तो उसको देखकर सशंकित स्त्रियाँ 'राम-राम' कहने लगती हैं और घृणाका प्रदर्शन करती हैं। पडोसी और निन्दक यह कहते फिरते हैं कि अमुक स्त्री भ्रष्टा है, परकीया है, अथवा व्यभिचारिणी है। यदि वह स्त्री हृदयवाली है तो वह अपनी निन्दा सुनकर उस पुरुषके सौहार्द प्रेमसे अपनेको वञ्चित करलेती है और इसप्रकार वह स्त्री-जीवनकी एक महान स्फूर्ति से हाथ धो बैठती है। परन्तु यदि वह आत्मविश्वासी

और वीरागना हुई तो अपने निर्मल पथ पर अग्रसर होती जाती है ; समाजके नियमोंको तोड डालती है क्योंकि अपनेलिये वह स्वय नियमरूप है , शुचिता और सारल्यका विचार ही उसके जीवनका आदर्श होता है न कि यह कि दुनिया उसके सम्बन्धमे क्या कहती है ।

कौन कह सकता है कि दुनिया और मनुष्य जातिको केवल इस बातके कारण कितना कष्ट हुआ है ! दुनियामें पुरुष जीवनके लिये इतना पवित्रकारी और उत्कर्पक और कोई वस्तु नहीं है जितना कि किसी स्त्रीका प्रगाढ, सच्चा निर्मल एवं कोमल सौहार्द और सहवास है । किसी पवित्र महिलाके पास रहनेसे पुरुष वासना पर विजय प्राप्त करता है , उसके मनमानसमें इस विषयके लिये एक क्षण भी स्थान नहीं मिलता । वह पवित्र स्त्रीके नेत्रोंमें भीतर तक देखता है । वहाँ उसे केवल विशिष्टता, सरलना, पवित्रता और आत्मसम्मान दिखाई पड़ता है । इस तरह उसके मनमे दैवी गुण उदय होता है और वह तृप्त हो जाता है । जब वह उसके संसर्गमें आता है तो उसे अपनेमें आदर्श पुरुषत्वके विकासकी अनुभूति होती है । इस प्रकारकी अनुभूति उसे पुरुषोंके ससर्गसे नहीं होती । जब वह उस महिलाका साथ छोड़कर संसार क्षेत्रमें अपना कार्य करने जाता है तो वह अपनेको अधिक विशिष्ट और पुरुषत्वपूर्ण पाता है । केवल उस महिलाके सौहार्द्रके लिए वह सहस्रों प्रलोभनोंको छोड़ सकता है और सहस्रों बाहरी एव भीतरी शत्रुओंकी अवहेलना कर सकता है ।

क्या ऐसे सौहार्दको 'भृष्टता' या अनाचार कहकर इसकी निन्दा करनी चाहिये ? परन्तु फिर भी ऐसा किया जाता है। क्या कारण है कि एक स्त्री और पुरुप सुहृद या सगी नही हो सकते ? क्या कारण है कि वे पुष्ट, पवित्र और निष्ट सौहार्दका आनन्द, विना स्त्रीको निन्दित और अपमानित किये एव पुरुषको अनाचारी कहलाये हुए, नहीं उठा सकते ? यदि हम सबका मन पवित्र हो और यदि सदेह और निर्दय निन्दाका नाश हो जाय तो यह सम्भव हो सकता है और स्त्री और पुरुष एक दूसरेको अधिक विशिष्ट, पवित्र और नि स्वार्थ जीवनके लिये उत्तेजित कर सकें। ऐसी दशाका फल इतना लाभप्रद होगा जिसका कभी हमने स्वप्न भी न देखा होगा। स्त्रियोंका शरीर और मस्तिष्क अधिक पुष्ट होगा। उस दशामें हमारे घरोंमें कम रोगी दिखाई देंगे। कारण यह है कि रोग तो स्नायुकी अव्यवस्थाके कारण ही होता है और स्नायुओंकी अव्यवस्था केवल कुसग और सौहार्द-हीनताके कारण होती है। स्त्री और पुरुषके स्वभावमे एक ऐसी प्रबल कामना होती है जो अपने से भिन्न वर्गके शक्तिदायक एव पवित्र सहयोगके लिये लालायित रहती है। स्त्री और पुरुप एक दूसरेके पूरक हैं, एकके बिना दूसरेका जीवन अपूर्ण होता है। स्त्रियाँ इस बातको जल्दी समझ नह , तीं। वे यह नहीं जानतीं कि वे रोगी क्यों है, वे यह नहीं जानती कि उनके स्नायु इतने उत्तेजित क्यों रहते हैं और वे क्यों इतनी जल्दी बीमार पड जाया करती हैं। बात यह होती है कि

अधिकांश—९९ प्रतिशत—स्त्रियोंका ब्याह उचित पुरुषके साथ नहीं होता अथवा सार्वजनिक निन्दा या परिस्थितियोंके कारण वह उचित पुरुषके साथ रहकर स्फूर्ति प्राप्त करनेमें असमर्थ है। थोड़े ही दिनोंकी बात है। मैंने एक ऐसी स्त्रीका विवरण पढा था जो असाध्य रोगोंसे पीडित थी और सदा चारपाईपर पडी रहा करती थी। वह इतने चिडचिड़े स्वभावकी थी कि उसकी सखियाँ और सम्बन्धी भी उससे घबड़ाते थे और कोई उसकी चिकित्सा करनेमे भी असमर्थ था। उसका एक सुहृद था। वह परदेश गया था। कई वर्ष बाद वह एक दिन लौटकर आया। उसके मनमें उस महिलाके प्रति पहलेके समान ही प्रगाढ़ स्नेह बना हुआ था। जब वह उस स्त्रीके पास पहुँचा उसी समय वह स्त्री निरोग होगई; उसके सारे शरीरमें नवयौवनका सचार होगया। उसका चिड़चिड़ा स्वभाव भी दूर हो गया। किसी निष्प्रभ एव ओजहीन महिलाको सदाचारी पुरुषोंके ससर्गमे रहनेकी स्वतत्रता दे दीजिये, वह तत्काल ओजस्वी एव प्रभापूर्ण हो जावेगी। उसके नेत्र चमकने लगेगे, उसके पीले कपोलों पर लालिमा दौड़ जावेगी और यदि वह पहले थकी हुई प्रतीत होती थी तो अब वह चचल और उत्साहसे भरी हुई मालूम पड़ेगी। यदि पहले वह मौन और अनाकर्षक थी तो अब वह कहानियाँ कहती है, मुग्धकारी व्यगोक्ति और सरसोक्तिसे अपने सहवासियोंको उल्लसित करती है। कितनी मूर्ख स्त्रियाँ उसके इस गुणको 'हावभाव'

या उसको 'विलासिनी' कहकर उसकी निन्दा कर सकती हैं। कुछ कह सकती हैं कि वह पुरुषोंके लिए लालायित रहती है। परन्तु सभीको यह जानना चाहिये कि इस प्रकारकी वार्तोंका जन्म कुविचार अथवा अज्ञानान्धकारके ही कारण होता है। क्या वे पुरुष भी जिनके साथ वह वार्तालाप करती है, उसे 'विलासिनी' कहते हैं ? नहीं, बिलकुल नहीं। वे उस शब्दका विचार तक नहीं करते। यदि वह अपनी सखियोंके कथनानुसार 'पुरुषोंके लिए लालायित' रहती है तो इसका अर्थ यह है कि वह विधाताकी बनाई हुई सच्ची नारी है, वह अदूषित है और प्रकृतिकी आज्ञानुसार वह अपने इस अधिकारको पूरी तरह समझती है कि वही पुरुषकी सुहृद, समकक्ष और संगिनी है।

यदि पुरुष भी उन्नत स्त्रियोंके साथ अधिक रहें और पुरुषोंके साथ अपेक्षाकृत कम तो वे बहुत लाभ उठावेंगे। विशिष्ट नारीका प्रभाव पुरुषको स्फूर्ति प्रदान करता है, इसके कारण पुरुषके मस्तिष्ककी कठोरतायें कोमल बन जाती हैं, नारीकी सरलता उसे महान बनाती है; उसका विश्वास उसे आदर्श-पालन सिखाता है। स्त्री पुरुषके बल, साहस और पुंसत्वका आदर करती है, इसीकारण पुरुषमें इन सद्गुणोंका अधिकाधिक विकास होता है।

मध्यकालीन राजपूत स्त्रियाँ अपने भाइयों और पतियोंको युद्धक्षेत्रमें जाते समय सुसज्जित किया करती थीं। उनके प्रोत्साहनके कारण वे सदा विजयी हुआ करते थे। कारण यह है कि स्त्री जिन गुणोंके कारण

पुरुषका आदर करती है, पुरुष उन गुणोंको अधिक से अधिक मात्रामे अपने पात ग्रहण करनेका प्रबल प्रयत्न करता रहता है।

ज्यों-ज्यों ससारके मनुष्य अपना मन मानस निर्मल करते जावेंगे त्यों-त्यों ससारमें स्त्री-पुरुषके सुन्दर, पवित्र और निस्वार्थ सौहार्दके उदाहरण मिलते जावेंगे—वे ऐसे सुहृद होंगे जो कामवासनाको तनिक भी महत्त्व न देंगे। मेरी एक विवाहित सखीसे एक युवकने कहा था, 'मैं आपके स्नेहके लिए कृतज्ञ हूँ। आपके लिए मेरे हृदयमें पुरुष मित्रोंसे अधिक स्थान है। स्त्री होनेके कारण आपका मेरे स्वभावके भीतरी भागपर भी प्रभाव पडता है, आपके कारण मेरे स्वभावमें श्रेष्ठ सद्गुणोंका विकास होता है।'

ऐसे स्फूर्तिदायक सौहार्दके मार्गमें सबसे बड़ा कण्टक यह है कि ज्योंही कोई पुरुष किसी स्त्रीसे स्नेह करना प्रारम्भ करता है त्योंही उसे सन्देह होता है कि वह पुरुष दुश्चरित्र है। अथवा यदि स्त्री कुमारी है तो उसे सन्देह होता है कि वह पुरुष ब्याह करना चाहता है। कुटिल संसारके लिए यह सन्देह स्वाभाविक हो गया है; परन्तु ऐसा होना सर्वदा आवश्यक है, इसमें मुझे सन्देह है। यदि किसी कुमारी और कुमारके सौहार्द और सहानुभूतिका विकास होकर दाम्पत्य प्रेममे परिणत होजावे तो यह बड़े सौभाग्यकी बात है; कारण वह प्रेम शुद्ध और सात्त्विक एव अनन्त है और उसकी नींवमें सौहार्द है। इसका एक कारण यह भी है कि दोनो एक दूसरेके स्वभावसे पूर्ण परिचित हैं। परन्तु यह

कहना ठीक नहीं है कि सदा इसी बातकी आशा रहती है या सदा यही होता है। कारण यह है कि यह भ्रम कई सुन्दर और स्फूर्तिदायक सुहृदोंको विचलित कर देता है और वे सदाके लिये इससे वंचित रह जाते हैं।

एक विधवाने अपनी एक बहुत ही मार्मिक कहानी मुझे सुनाई। वह कहीं परदेशमें अपने सम्बन्धीके यहाँ गई हुई थी। वहाँ पडोसमें दो युवक रहते थे। ये युवक बहुत गुमसुम रहा करते और किसीसे कुछ भी सम्पर्क नहीं रखते थे। पड़ोसकी कुछ युवतियाँ उनसे विनोद और मनोरंजन करना चाहती थीं परन्तु वे ऐसी दुश्चरित्र थीं कि युवक सदा उनसे घृणा करते रहते। इस विधवाका उनसे स्नेह हो गया और फल-स्वरूप वे दोनों उसके सुहृद बन गये। वे दोनों उसके साथ बहुत वार्तालाप करते और सदा साथ रहते। सभा-समाजमें भी वे एक साथ जाते और वहाँ पर आलोचना-प्रत्यालोचना हुआ करती। धीरे-धीरे तीनोंने अपने हृदयकी बातें एक दूसरेके सामने रख दीं और एक दूसरे-की सलाहसे उन्होंने अपनी कठिनाइयोंको दूर करनेका निश्चय किया। सक्षेप में वह उनकी सच्ची सुहृद बन गई। यद्यपि वह बहुत आकर्षक और सुन्दर थी परन्तु वह उन युवकोंसे अवस्थामें अधिक थी। वह अपने स्वर्गीय पतिको भूली नहीं थी। वह आदर्श पतिव्रता थी। अब उस मार्मिक कहानीका करूणा-पूर्ण भाग आया। ईश्वर न करे कि ऐसी कहानिया सुननेको मिले। एक दिन सन्ध्या समय उन युवकोंका

एक 'मित्र' आया था। उससे जब वे बातें कर रहे थे उसी समय इस महिलाको उधरसे जानेका काम पड़ा। द्वार खुला होनेके कारण उसने स्पष्ट सुना कि वे क्या बातें कर रहे हैं। उनके मित्रने उनसे पूछा कि उनमेंसे कौन उससे व्याह करना चाहता है!

उस स्त्रीने कहा, 'इतना सुनकर मेरा माथा घूमने लगा, मैं न तो आगे बढ सकी और न पीछे लौट सकी। मैं उस प्रश्नके उत्तरमें वहीं खड़ी रही जो मुझे मनुष्य-समाजके नैतिक पतनकी प्रतिमाके समान प्रतीत होता था। एक क्षण के कष्ट-प्रद मौनके बाद उनमेंसे बड़ेने कहा, 'नहीं, नहीं, आप हमारे और उनके साथ अन्याय कर रहे हैं। ऐसी कोई बात नहीं है।' मैं दौड़कर अपने घरमें भाग आई, और आज स्वीकार करती हूँ, मैं भर पेट रोई। हमारा स्नेह कितना सरल और शुद्ध था! इन युवकोंने मेरा बडी बहनके समान आदर किया था। परन्तु अब! अब तो उनके मनमें विषका समावेश करा दिया गया था। मुझे स्पष्ट प्रतीत होने लगा कि अब हमारा स्नेह पहलेके समान पवित्र नहीं हो सकता। वास्तवमें हुई भी यही बात। उसके बाद उनकी क्या बातें हुई मैं नहीं जानती, परन्तु दूसरे दिन सूर्योदयके पूर्व ही एक युवक चला गया। दूसरा दो-एक दिन और रहा। ऐसी बात तो नहीं कही जा सकती कि उन युवकोंका हृदय ही बदल गया था; उनके मनमें मेरे प्रति जो आदरका भाव था वह तनिक भी कम नहीं हुआ था। परन्तु उनकी चिन्ता या व्याकुलताका कारण क्या

था ? इसका स्पष्ट कारण यही था कि उनके मनमे यह भाव पैदा हो गया था कि उनका कार्य उचित नही है, उनके ही कारण मेरी निन्दा हो रही है और उनके मनमें यह बात भी बैठ गई थी कि उनके कारण मेरे साथ अत्याचार हो रहा है। इन्हीं मनोगत भावों और शकाओंने उन्हें व्याकुल कर दिया और उस घृणित एव गर्हित प्रस्तावने उनके मनको मथ डाला। मुझे इतना तो सतोष हुआ कि मेरे स्नेहके कारण दो पुरुषोंको कुछ स्फूर्ति मिली। मुझे भी अपनी परीक्षा करनेका सुन्दर अवसर मिला था, मैं सफल हुई थी। मुझे विश्वास है कि हम दोनो ही उन घडियोको कभी न भूलेंगे जब कि हम मस्त होकर ससार एव व्यक्तिकी समस्याओंके सुलझानेके सम्बन्धमें बहस किया करते थे। मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है कि उस समयकी स्मृति वासनामय परिस्थितियोंसे हमारा उद्धार करेगी और सत्य पथपर आरूढ रहनेके लिये स्फूर्ति प्रदान करेगी।'

कितने दु:खकी बात है कि ससारमे ऐसी ही बातोंका अधिक प्रसार है। ससारके लिये सौहार्द और विलासिता अथवा कामुकताका अतर समझना बड़ा कठिन है। विलासिताकी सभीको निन्दा करनी चाहिये ; किसीको यह विचार भी नही करना चाहिये कि स्त्री और पुरुषके सौहार्दका प्रचार करते समय मेरा आशय विलासिता अथवा प्रणयलीलासे है। भगवान ऐसा न करें। सोहार्द उन सभाको उन्नत और स्फूर्ति प्रदान करता है जो पवित्र, विशिष्ट, पुष्ट और सुन्दर हैं।

मुसकान

महायुद्धको प्रारम्भ हुए बहुत दिन नहीं बीते थे। उन्हीं दिनो मैंने दैनिक पत्रोंमें एक कहानी पढी। यह ऐसी कहानी थी जिसकी पुनरावृत्ति करना लाभप्रद है क्योंकि कहानीका सार तत्व यह था कि एक सरल मुसकानने किस प्रकार एक वीर सैनिकके जीवनको स्फूर्ति एव विभूति प्रदान की। मैं सक्षेपमें उसे सुनाती हूँ। एक सिपाहीको लामपर जानेकी आज्ञा मिली थी। रास्तेमें भरी हुई गाडीमें यात्रा करते समय किसीने मुसकरा दिया। वह दुनियामें अकेला था वह नहीं जानता था कि प्रेम या प्यार क्या वस्तु है अथवा किसीको उसके विषयमें

चिन्ता है या नहीं। इस जीवनमें उसके लिये तनिक भी आकर्षण नहीं रह गया था ; वह जानता था कि कोई उसके नामपर गर्व करनेवाला नहीं है ; किसीको यह चिन्ता नहीं है कि वह युद्धमें मर जावेगा या लौटकर आयेगा। कर्त्तव्य का सन्देश पाते ही वह उदास परन्तु वीर और अपना कार्य करनेके लिये दृढ बनकर चल पड़ा। गाड़ीमें ठसाठस आदमी भरे हुए थे परन्तु न तो किसीने उस खाकी वस्त्रधारी सिपाही-की ओर ध्यान दिया और न उसने किसीकी ओर। कुछ समय बीतने-पर उसे ज्ञात हुआ कि कोई मधुर और भावपूर्ण दृष्टिसे उसकी ओर देख रहा है ; उसमें ऐसा भाव था जिससे उसका हृदय विचलित हो गया और तब उसे भली प्रकार ज्ञात हुआ कि वह दुनियामें कितना अकेला है कि किसीने पहले उसकी ओर दया करके देखा भी नहीं। देखने वाली और कोई नहीं थी, एक कुमारी कन्या थी जिसका बदन कोमल और गम्भीर था। जब उसने उसकी ओर देखा तब उसने दृष्टि फेर लिया। एक या दो बार ऐसा प्रतीत होता था मानो वह उससे बातचीत करना चाहती हो परन्तु स्वाभाविक लज्जा एवं शीलने उसको दबा दिया और उसने फिर मुँह फेर लिया। सिपाही भी बड़ा भला था। उसने भी उसकी ओर घूरनेकी अशिष्टता नहीं की • यद्यपि उसकी यह लालसा थी कि वह उससे सम्भाषण करे। वह चाहता था कि कोई मरनेके पूर्व उससे एक बार प्रेमपूर्ण बात तो कर ले ; उसे पक्का विश्वास हो गया था कि युद्धमें उसका अन्त अवश्य हो जायगा। उसने

देखा था कि उसके साथियोंको उनकी माताएँ, बहनें, और भाइयोंने किस प्रकार विदा किया था, उसने अपने साथियोंकी स्त्रियोंके नेत्रोंमें छलछलाते हुए अश्रुकण देखे थे और उसके मनमें एक कठोर शूल चुभ गया था—कोई उसकी चिन्ता करने वाला नहीं है! थोटी दूर जाने पर वह कुमारी गाडीसे उतर गई परन्तु वह प्लेटफार्मपर खडी रही क्योंकि द्वारसे बहुतसे लोग उतर रहे थे। उसका मुखमण्डल कभी रक्त वर्णका हो जाता, कभी फीका पड़ जाता। ज्यों ही गाड़ी चलनेको हुई उसने सैनिककी ओर देखा और मुसकरा दिया। सिपाहीने उस मुसकानको अपनी स्मृतिके सुरक्षित भागमें रख लिया। उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो एकान्त अन्धकारमें सूर्यका उदय हुआ हो। एक सुन्दर कुमारीने, जिसका कोमल हृदय दयार्द्र और दूधके समान उज्ज्वल और पवित्र था, उसकी ओर देखकर मुसकरा दिया था! सैनिककी छाती फूल उठी, उसका मन ओज और उत्साह से भर आया। वह वास्तविक पुरुष बन गया था। अब उसके जीवनका भी कुछ मूल्य था क्योंकि किसीने उसको देखकर प्रसन्नता प्रकट की थी। समय बीत चला। परन्तु उस स्मितहास की स्फूर्ति सदा सैनिकके हृदय मे बनी रहती थी। उसने मनमें उस कुमारीके प्रति कृतज्ञता प्रकाश करनेकी अभिलाषा प्रबल हो उठी जिसने अपने मुसकानकी दयालुता, पवित्रता, और मधुरता से उसका जीवन बदल दिया और उसके हृदयको आनन्दोल्लाससे भर दिया। वह किसी प्रकार उसके साथ धृष्टता नहीं करना

चाहता था। उसके लिये वह अलौकिक थी और उसकी पहुँचसे बाहर थी ; परन्तु उसने उसको देखकर मुसकरा दिया और इस प्रकार उसने उसका एकान्त और निराशाकी समाधिसे उद्धार किया था। उसने उसका जीवनको स्फूर्ति प्रदान किया और उसका जीवन चमत्कारपूर्ण हो गया ; इसके लिये कृतज्ञता-प्रकाश आवश्यक था। इसीलिये उसने दैनिक पत्रोंमें यह कहानी छपवाई। उसे आशा थी कि वह भी पढेगी और जानेगी।

हमें भी आशा करनी चाहिये कि उसने पढ़ा।

कहानीमें जो त्रुटि रह गई है उसकी पूर्ति कल्पनासे करिये। उस कुमारीकी कल्पना करिये, वह पवित्र, सरल, सुन्दर और लज्जा-शील रही होगी। उसने उस दु खी और उदास सैनिकको देखा होगा। उसने अनुमान लगाया होगा कि वह एकाकी है। उसके सामानसे उसने अनुमान लगाया होगा कि वह लामपर जा रहा है। वह उससे कुछ कहना चाहती है। वह यह कहना चाहती है कि उसे उसके अकेले होनेके कारण सहानुभूति है ; उसे भी उसकी चिन्ता है। वह अपने मनोभाव प्रकट न कर सकी, उसकी लज्जाशीलताने उसपर विजय कर लिया। वह अवसरपर चूक गई। परन्तु गाडीसे उतरने-पर वह छोड़ न सकी। जब गाड़ी छूटने लगी तब वह उसकी ओर देखकर मुसकरा पड़ी। और फिर भीडमें मिलकर चल दी। स्यात् उसके मनमें यह भाव रहा होगा कि वह अवसरपर चूक गई।

क्या कोई मुसकानका मूल्य आंक सकता है ? यदि हम मुसकान की शक्तिसे परिचित हो जावे तो हम अबसे अधिक अवसरोंपर मुसकाने लगें।

हम सदा अपने सेवकों और अन्य सहयोगियोंको डाटते रहते हैं। उनके सामने कभी विना गभीर वने नहीं जाते। हम यह भी चाहते हैं कि वे कभी हमारे सामने न तो हसे या मुसकराये। परन्तु हम यह जानते हैं कि कोई प्रसन्न चित आकर हँसी खुशीमें हमसे ऐसा काम करा लेता है जो उसके गभीरताधारण करनेपर हम कभी नही करते। इस बातको जानते हुए भी हम अपने आपको धोखा देते है और यह सोचा करते हैं कि अपने सेवकों या सम्पर्कमे आने वाले सहयोगियोंके सामने कभी प्रफुल्लित होकर उपस्थित नहीं होना चाहिये। मेरा यह विश्वास है कि प्रत्येक स्त्री-पुरुप केवल मुसकानके कारण अपने सेवकों या सहयोगियोंसे अधिक काम प्रसन्नता पूर्वक करा सकता है। आपकी प्रफुल्लता उनके लिये विभूति अथवा स्फूर्ति बन जायगी और यदि आप उनको देखकर प्रसन्न रहना और मुसकाना प्रारम्भ कर दें तो मै मानूँगी कि मेरा परिश्रम सफल हो गया।

यदि मुस्कराहटोंमे इतना गुण है तो हम लोग क्यो नहीं इसका अभ्यास करते ?

मुसकानोंके भी कई भेद हैं।

निर्दय मुसकान भी होती है जो तलवारकी धारसे भी अधिक तीव्र

और चोट करने वाली होती है। युवक परन्तु भावुक हृदयोको कुचलनेके लिये उनमें भयानक शक्ति होती है। फिर भी निर्दय हृदयकी ही मुसकान निर्दय होती है।

कुटिल मुसकान भी होती है—यह तुषारके समान ही सुखाने और नष्ट करनेवाली होती हैं। इस प्रकारकी मुसकान किसीका भी जीवन नष्ट कर सकती है और वर्षोंके परिश्रमसे प्राप्त फलका विनाश कर सकती है।

अवहेलनात्मक मुसकान भी होती है। क्षुद्र चरित्रका यह पुष्ट प्रमाण है। यह इतनी निर्बल है कि इसका प्रभाव किसी पर नहीं पडता। ऐसे लोगोंपर दया करनी चाहिये।

गुरुता और अनुग्रह-द्योतक मुसकान भी होती है। कुछ निःसार भी होती हैं। इनमेंसे किसीमें स्फूर्ति या सहायता प्रदान करनेकी शक्ति नहीं होती, वरन् उनसे उनके मालिकका नैतिक पतन स्पष्ट दिखाई देता है। मूर्खो और गुण्डोंके मुसकानका भी एक ढग है। हे भगवान, उनको तुम्ही सुपथगामी बना सकते हो! कामी जीवोंकी मुसकान भिन्न प्रकार की होती है और वह उन्हे समाजकी दृष्टिमे गिरा देती है। धूर्तताकी मुसकान मुसकराने वालेको ही धोखा देती है। यह कहनेकी आवश्यकता न होगी कि उपर्युक्त मुसकानोंमेसे एक भी ऐसी नहीं है जो जीवनको महान और श्रेष्ठ बनानेके लिये स्फूर्ति प्रदान कर सके।

हृदयको स्फूर्ति प्रदान करने वाली मुसकानको दयार्द्र मुसकान

कहते हैं। यह मुसकान सभी प्रकारके दुखों और चिन्ताओंको हृदयके बाहर निकाल देती है चाहे आपका मन कितना ही उदास अथवा चिन्तित क्यों न रहा हो। उन मुसकानोंसे हृदयकी पवित्रता प्रकट होती है।

दूसरी सुन्दर मुसकानको देदीप्यमान मुसकान कह सकते हैं। इन मुसकानोंमें उल्लास और सौन्दर्य भरा रहता है। मुसकराने वालेका बदन प्रफुल्लित होता है और उससे हमारे बदन पर भी प्रसन्नता और पवित्रताका प्रकाश फैल जाता है।

सुन्दर मुसकानको सहानुभूति सूचक भी कह सकते हैं। इससे शीतल और एकाकी हृत्तलमे प्रकाश और जीवनका प्रादुर्भाव होता है। जीवनके अनेक द्वन्दोंमें उलझे रहते हुए भी हम सहानुभूति प्रदर्शन करनेवालोंके प्रति कृतज्ञता प्रकाश करते हैं। इस प्रकारकी मुसकान नष्ट होते हुए हृदयोंका उद्धार कर देती है। इस प्रकार जो लोग सौन्दर्य और आनन्दसे शर्माते थे, वे पुन जीवनमें सौन्दर्य और आनन्द प्राप्त करने लगते हैं।

एक प्रकारकी ऐसी मुसकान भी है जो थकानके समय हमारे लिये क्लान्तिहर होती है। कारण कि जब हमारा ध्येय दूर प्रतीत होता है और मार्ग दुर्गम रहता है तब हम उस मुसकराहटके कन्धे पर हाथ रखकर सरलतापूर्वक अग्रसर होते हैं।

ऐसी मुसकान भी होती है जो पथ-भ्रष्टोंको पुन· पवित्रता, शान्ति

और विश्रामकी ओर बुलाती है। भयंकर तूफानमें वह उस प्रकाशके समान है जो भूले-भटकोंको रास्ता बताया करता है।

विशिष्ट और शक्तिपूर्ण मुसकान भी होती है जो विशिष्ट और शक्ति-पूर्ण स्त्री-पुरुषोंके अधरों और नेत्रोंसे बरसती है, चाहे आप झोंपड़ोंमें जावें, चाहे कारखानोंमें, चाहे खेतोंमें, चाहे बाजारोंमें, वह सर्वत्र आपको मिल सकती है।

सौहार्द, मैत्री, समन्वय, प्रेम और विभूतिसे भरी हुई मुसकान भी होती है।

वह दूसरी ही प्रकारकी मुसकान है जो जीवनको स्फूर्ति और विभूति प्रदान करती है।

प्रिय पाठको और पाठिकाओ, आप किस प्रकार की मुसकान पसन्द करते हैं?

उद्यम

'अपने अमूल्य समयकी एक-एक घड़ी किसी उद्यममे व्यतीत करनी चाहिये। यही आनन्द है। इससे कोई क्षण ऐसा नहीं रह पाता जब कि हमें पछताना या सोचना पड़े।'

—इमर्सन

'एक उद्यमी मजदूर यह नहीं समझता कि

उसका उद्यम उसे उस महान मजदूरके कितना समीप पहुँचाता है।

जो निशिदिन व्यस्त रहता है।'

—ह्विटमैन

स्त्री-पुरुषोंको जीवनकी एक महान स्फूर्ति उनके उद्यमोंसे प्राप्त करनी चाहिये। बचपनमें भी उसे प्रत्येक कार्यमें स्फूर्ति मिलती है और मिलनी चाहिये। उद्यममें व्यस्त रहनेका ही अर्थ आनन्द है और आलस्यमें जीवन व्यतीत करनेको ही विपत्ति कहते हैं। आलस्यसे न तो कभी स्फूर्ति प्राप्त हुई है और न हो सकती है। इसके विपरीत वह हमें दुर्गुण सिखाती है और हमारा जीवन निरानन्द हो जाता है। यह बात सभीके लिये सत्य है चाहे कोई व्यक्ति धनी हो चाहे दरिद्र। उद्यममें व्यस्त स्त्री और पुरुष ही सबसे अधिक प्रसन्न और सन्तुष्ट रहते हैं। कार्लाइलने ठीक ही कहा है—'वह व्यक्ति धन्य है जिसने अपना उद्यम ढूंढ निकाला है; उसके लिये और किसी दैवी वरदानकी आवश्यकता नहीं है।'

अपने समयका किसी उद्यममें सदुपयोग न करनेसे स्त्री-पुरुषोंका पतन होता है। या तो हमें उद्यम करना चाहिये या हम पृथ्वीका भार बन जावेंगे और प्रकृतिको हमारी तनिक भी आवश्यकता न होगी। बिना किसी उद्यमके मनुष्य कर्कश और चिड़चिड़े स्वभावका एवं असंतोषी और धैर्य-हीन हो जाता है। क्या कभी आपने उस पुरुष, स्त्री, बालक या बालिका को ध्यानपूर्वक देखा है जो यह कहे 'मुझे कोई काम नहीं है?' उसके स्वरमें कितनी निर्बलता है? उसके मुख-मण्डल पर उदासी छाई हुई रहती है और रुग्णताके कारण वह उदास हो रहा है। इसका क्या कारण है? यदि करनेके लिये किसी कार्यका

न होना सौभाग्यका चिह्न है जिसकी सभी कामना करें तो उलटी बात होती। परन्तु बात और ही है। उलटे बात यह है कि यह प्रकृतिके विरुद्ध विद्रोह और किसी व्यक्तिकी मनुष्यताका अपमान है। करनेके लिये कामका न होना विश्वके नियमोके अनुकूल नहीं है।

यह बात नहीं है कि अपनी रोटीके लिये प्रत्येक स्त्री-पुरुषको दिन-रात परिश्रम करना चाहिये। यदि समाजका आदर्श संगठन किया जावे तो इस प्रकारके परिश्रमकी आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी। कहा जाता है कि फिर जब सतयुग आवेगा तब स्त्री-पुरुषको अपनी रोटीके लिये परिश्रम नहीं करना पड़ेगा। क्या उन तपोनिधि ऋषियों और मुनियोंको भी काम करनेकी आवश्यकता पडती थी, जो जंगलों में निराहार विचरा करते थे? वे वनको स्वच्छ और पवित्र क्यों रखते थे? उनको इतना परिश्रम करनेकी क्या आवश्यकता थी? वे कार्य-में व्यस्त रहनेको ही शिक्षाका साधन मानते थे। वे कार्यमें व्यस्त रहनेको एक ऐसा क्षेत्र मानते थे जहाँ वे अपनी उत्पादक शक्तिका प्रयोग कर सकें और सौन्दर्य एवं उत्कर्षका ज्ञान प्राप्त कर सकें। जब मनुष्यने अपना जन्मसिद्ध अधिकार खो दिया और प्रकृतिके नियमों-के विरुद्ध आचरण करने लगा तब उसे अपनी क्षुधा-तृप्तिके लिये अनिवार्य परिश्रम करना पड़ा। ऐसा समय कभी नहीं आया जब मनुष्य काम नहीं करता था, परन्तु एक युग ऐसा था जब क्षुधा-तृप्तिके लिये परिश्रम नहीं करना पडता था। जब मनुष्य उद्यमके आनन्द को

समझकर उद्यम करना पुनः सीख लेगा ; और जब वह अपने हाथसे परिश्रम करनेमें उल्लसित होगा तब पुन. एक ऐसा युग आवेगा जब उसे क्षुधा-तृप्तिके लिये परिश्रम नहीं करना पड़ेगा।

महात्मा लोग उस समय तक भोजन नहीं करते जब तक कि वे उसके योग्य परिश्रम नहीं कर लेते। चाहे किसी स्त्री या पुरुषके चरणों पर लक्ष्मी लुढ़कती फिरती हो, फिर भी उसका आलसी बनना क्षम्य नहीं है। आलस्य मृत्यु है और उद्यम जीवन है।

'मनुष्यके लिये प्रति दिनका कार्य—चाहे मानसिक या शारीरिक—निश्चित है। इसीसे उसकी प्रतिष्ठा प्रकट होती है। अपना निश्चित कर्तव्य करिये। उद्यम आलस्यसे उत्कृष्ट है। उद्यमके बिना शरीरका जीवन रुक जाता है। यदि कोई व्यक्ति बिना परिश्रमके रूपमे मूल्य चुकाये पृथ्वीसे फल लेकर खाता है तो वह चोरी करता है।'

यदि श्रमकी श्रेष्ठता मान ली जाय और यह भी मान लिया जाय कि उद्यम करना ही पुरुषार्थकी घोषणा करना है, फिर भी मनुष्यके हृदयके लिये श्रम करना कीर्ति है। अपने समयका सदुपयोगही आनन्द है और अपने समयको व्यर्थ आलस्यमें गँवादेना विपत्तिमे डाल देगा। एक कविने कहा है—'कार्यमें व्यस्त न रहनेको हम विश्राम नहीं कह सकते।' और हम बहुधा देखते हैं कि जो किसी कार्यमें व्यस्त नहीं रहते वह अधिक थकते हैं। व्यस्त रहनेवालेको एक और कामके लिये सदा समय और शक्ति मिला करती है।

जो लोग व्यस्त रहते हैं उनका समय कटनेमें देर नहीं लगती। उद्यमी मनुष्य सदा कहा करते हैं, 'समय बड़ी जल्दी बीत रहा है। इतना बड़ा दिन नहीं होता कि मन चाहा काम हो सके।' जब किसी-को यह कहते सुना जाय कि समय नहीं कटता तब हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि वे बेकार हैं। मैं कुछ ऐसे लोगोंको जानती हूँ जो अनिद्रा-रोगसे पीड़ित रहते हैं और उन्होंने निद्राके लिये अनेक यत्र-तंत्र और औषधियोंका प्रयोग किया, परन्तु सब व्यर्थ सिद्ध हुआ। सयोगसे उन्हें उद्यम करनेके लिये बाध्य होना पड़ा। अब उन्हे अनिद्रा या अपचकी कभी शिकायत नहीं हुई। केवल मजदूर और उद्यमी ही उद्यमकी स्फूर्ति पहचानते हैं, केवल मजदूर ही थकावट जानता है और थके हुए लोग ही विश्रामकी मधुरता और आनन्दका मजा लूटते हैं।

आलस्यका अभिशाप केवल अनिद्रा ही नहीं है। मोटापन, अपच और उसके कारण अनेक रोग, सुस्ती और इसके कारण मस्तिष्क और शरीरकी अव्यवस्था भी आलसी स्त्री और पुरुषोंको वरासतमें मिलती है। ऊपर कहा जा चुका है कि शरीरका जीवन उद्यमके बिना रुक जाता है।

इससे बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि धनी हो जाना ही सफलताका लक्षण नहीं है। एक न्यायाधीशने एक अपराधीने पूछा—'आपका क्या पेशा है?'

'मैं सज्जन हूँ ।'

"सज्जन' शब्दका क्या अर्थ है ?"

'मैं कुछ नहीं करता ।'

'सच ! यदि कुछ न करना ही सज्जनताका लक्षण है तब तो गलियोंमें सैकड़ों सज्जन मारे-मारे फिरते मिलेंगे ।'

ऐसा होता है कि एक शुद्धात्मा, प्रसन्न-चित्त और संतोषी परन्तु दरिद्र व्यक्ति को जीवनमें उस धनी व्यक्तिसे अधिक आनन्द मिलता है जो आलसी है और दूसरोंके पसीनेकी कमाईको हड़पकर धनी बना बैठा है। दरिद्र तो अपनी दरिद्रताकी सीमा जानता है। और उसे अपने उद्यमसे स्फूर्ति भी मिला करती है। उसका मस्तिष्क स्पष्ट और मन प्रफुल्ल रहता है, वह भविष्यके गर्भमें अपने सुखको देखता है; परन्तु धनी, जो अपने हाथ या मस्तिष्कसे काम नहीं करता वरन् दूसरोंकी कमाई लूटनेमें ही व्यस्त रहता है. पतनके गहरे गड्ढेमें जा पड़ेगा और उसे मजदूर बनना पड़ेगा। उस दशामें उसने जो कुछ छीन लिया था, लौटा देना पड़ेगा। 'समयकी चक्की धीरे-धीरे चलती है परन्तु इसकी पिसाई बहुत महीन होती है।

मजदूर और उद्यमी ही दिनके अवसानके समय कह सकता है. 'अब मैं विश्राम करूँगा।

अकारण अभिशाप

'अकारण अभिशाप नहीं दिया जावेगा।'

जो व्यक्ति किसी वस्तुके वाह्य रूपको ही देखता है और उसकी वास्तविकता पर कुछ भी ध्यान नहीं देता, जो समुद्रके किनारे गाजको देखता है, परन्तु उसके गर्भमें छिपे रत्नोंको प्राप्त करनेकी चेष्टा नहीं करता, वह सदा इधर-उधर भटकता रहता है और आशाकी लहर एव निराशाके गर्तमें डूबता-उतराता फिरता है। किसी भी जनसमूहमें जाइये और शरावीके ढीले-ढाले अवयवोंको देखिये, भिखमगेकी गुदडी और गन्दगीपर ध्यान दीजिये, अभागेकी उदासी और निराश्रिता

देखिये। देखने पर पहला विचार यह होता है कि यदि ऐसी दशा भाग्य या संयोगवश होती है और भविष्यमें किसी की भी दशा ऐसी हो सकती है, तो जीवन कभी भी जीनेके लायक नहीं होता। परन्तु जब हम कार्य-कारणके नियमको समझ लेते हैं तब हमारी समझमें आजाता है कि जो जैसा बोवेगा, वैसा काटेगा।

जब हम इन तत्वोंकी गहराईमें जाते हैं तब हमें ज्ञात होता है कि अभाग्य, कुयोग या दुर्दैवके कारण उनकी यह दशा नहीं हुई है। वरन् बात यह है कि प्रत्येक स्त्री-पुरुष उस पथको स्वयं बनाता है जिसपर आज वह चल रहा है। उन्होंने स्वयं जो बीज बोया है उसीकी फसल उन्हें काटनी पड़ती है। 'पापकी मजूरी मृत्यु है।' उपरोक्त नियम तनिक भी लचीला नहीं हो सकता। कोई भी व्यक्ति अपने मनसा-वाचा-कर्मणा-द्वारा किये हुए पापोंसे बच नहीं सकता। मनसा-वाचा-कर्मणा-से ही तो प्रत्येक व्यक्तिका चरित्र बनता है। प्रकृति प्रत्येक कार्यकी मजूरी निश्चित कर देती है—जैसा भला या बुरा कार्य होता है वैसी ही मजूरी होती है। यदि प्रकृतिकी दुष्टता अथवा अभाग्य एवं विधाताके वाम होनेके कारण ही मनुष्य दरिद्र होता या पाप करता तो जीवन एक बीभत्स दृश्य होता और सज्जनता एवं पवित्रता केवल निरर्थक शब्द होते। नहीं ; सज्जन, पवित्र, सच्चा और विशिष्ट व्यक्ति भी वही काटेगा जो उसने बोया है। 'सदाचारीका सदा भला होगा, क्योंकि अभिशाप कभी भी अकारण नहीं मिलता।'

यही बात धर्मग्रन्थोंमें बड़ी स्पष्टतासे व्यक्त की गई है। धोखेबाज पुत्र जैकावको उसका पुत्र भी धोखा देता है। हत्यारा और अनाधिकारी अहाबने कहा—'ऐ वैरी, क्या तुम मुझे पकड सकते हो?' इसका उत्तर है—'मैंने पकड़ लिया है, क्योंकि तुमने कुकर्म करनेके लिये अपने आप को बेच दिया है।' यही सत्य ईसा मसीहकी शिक्षाओंमें भी निहित है। उन्होंने कहा—'अपनी तलवार अपने म्यानमें रखो। कारण कि, जो तलवारका प्रयोग करेगा वह तलवारसे ही नष्ट होगा।' एक व्यक्तिको ईसाने नीरोग किया था। उससे उसने कहा—'अब पाप न करना। कारण कि सम्भव है इससे भी भयानक रोगमें तुम फँस जाओ।' यह तो महत्वपूर्ण व्यवस्थायें हैं। 'निर्णय न करो और कोई तुम्हारे बारेमें भी निर्णय न करेगा।', 'दान दो, और तुम्हें भी मिलेगा।', 'जिस तराजूसे तुम देते समय तौलोगे उसीसे तुम वापिस भी पाओगे।'

जब मनुष्य इस सत्यको समझ लेता है तब उसका मार्ग सरल हो जाता है। परन्तु जब तक वह अपनी विपत्ति या दुरावस्थाका कारण विधाताका कोप या अभाग्य मानता रहेगा तब तक दरिद्रता और दुःख, कष्ट और चिन्ता उसके पीछे छायाकी तरह पडी रहेंगी। आवश्यकता यह है कि सभी जान जावें कि हमी अपने भाग्यके निर्माता हैं और केवल अपनेमें ही वर्तमानको परिवर्तन करनेकी शक्ति है और आप उसे अपने मनके अनुसार बना सकते हैं। कारण यह है कि वर्तमान भूतका पुत्र है और भविष्य वर्तमानका। जो कुछ मैंने अपने

आपको बनाया है वही मैं हूं।

यदि मनुष्य इस सत्यको समझकर उसके अनुसार कार्य करना प्रारम्भ कर दे तो मनुष्य-जातिके कुटुम्बकी जो दशा होगी उसकी कल्पना की जा सकती है। उस दशामे हमारे नगरोंकी सीडदार गलियों मे वस्त्र-हीन और रोगी बच्चोंकी भीड़ नहीं दिखाई देगी, क्योंकि तब स्त्री और पुरुष अपना धन शराब पीनेमें बर्वाद न करेंगे, जो उन्हें गैर-जिम्मेदार बनाकर अश्लील कार्य करनेके लिये बाध्य करता है। मेरा तो यहाँ तक कहना है कि तब मयखाने और शराबकी दुकानें न रहेंगी, जहाँ कि जनसाधारण अपना रुपया बर्वाद कर सकें, क्योकि धनी लोग समझ जावेंगे कि शराबकी दुकानों और मयख़ानोंसे जो धन उनके पास मुनाफेके रूपमें आता है उसके साथ शराबियोंकी विपत्तिका भी कुछ अश अवश्य आवेगा। तब लोगोंको पता चल जावेगा कि शराब पीनेवाले और शराबकी दुकान रखनेवाले दोनों समाजके लोगोंके लिये समान घातक हैं।

बहुत लोगोंका यह विश्वास है कि शराबका ठेकेदार या दुकानदार या शराब निकालनेवाले कलवार उतने बडे पापी नहीं हैं जितने बडे शराब पीनेवाले। उनका यह भी विश्वास है कि शराब पीने वाले नरकमे जावेंगे और कलवार अपने कुछ पुण्य कर्मोंके बलपर स्वर्ग जा सकता है। नहीं, ऐसी बात नहीं है। भगवान अकारण अभि-शाप नहीं देता। जीवनका चक्र सदा चला करता है और जो लोग

दूसरोंको पीस रहे हैं वही कल पाटेके बीच पड़ेंगे और स्वय पीसे जावेंगे। 'जिस तराजूसे आज आप तौल रहें हैं उसीसे आपको वापिस भी लेना पड़ेगा।' जब हम सब अपनी काम-वासनाके कारण होने वाले भयकर परिणामको समझ लेंगे तब वेश्यावृत्ति और अन्य प्रकारके व्यभिचारका उन्मूलन होना बड़ा सरल हो जावेगा। आज जिस स्वार्थ और लिप्साके कारण लोग व्यभिचार करते हैं वह धीरे-धीरे परन्तु स्थिर गतिसे पीड़ा और विपत्तिका अधिकार बढाती जा रही है और चाहे बुढ़ापेमें या किसी दूसरे जन्ममें हमें भी वही भोगना पडेगा। हम जब कभी किसी स्त्री या पुरुषसे कुछ छीन लेते हैं या किसीकी पवित्रता या स्वास्थ्य नष्ट करते हैं तब हम अपने चारों ओर अधकार और विपत्तिका ऐसा कटघरा बनाते जाते हैं जहांसे फिर निकल जाना उस समय तक असम्भव है जब तक कि हम एक-एक पैसा या पवित्रता और स्वास्थ्यका एक-एक कण भरपाई न कर दें।

लोग आज चिल्लाते हैं, "हाय रुपैया! हाय रुपैया! हाय लक्ष्मी! हमें रुपया मिलना चाहिये, चाहे कोई मरे चाहे जीवे। चाहे युवकका गुलाबी चेहरा पीला पड़े, चाहे दरिद्र स्त्री-पुरुषोंको बदनामी या बीभत्सताका जीवन बिताना पडे, हमे तो धनी होना है।" परन्तु जब वे अपनी दुर्दमनीय लिप्साका परिणाम भली प्रकार देख लेंगे और यह उनकी समझमें आजावेगा कि कभी ऐसा भी समय आवेगा जब कि उन्हें भी इसी प्रकार परिश्रम करते मरना पडेगा या बदनामी एव बीभ-

स्तताका जीवन व्यतीत करना पड़ेगा तब वे 'हाय रुपैया ! हाय रुपैया !' चिल्लाना बन्दकर देंगे । उस समय वे यह कहेंगे 'हमें ऐसी कोई वस्तु नहीं चाहिये न तो हम इतना स्वस्थ अथवा प्रसन्न होना चाहते हैं, न इतना धनी होना चाहते हैं या इतना आराम भी नहीं चाहते हैं जो साधारण जनको न प्राप्त हो सके ।' और इस प्रकार जब पाप न होगा तब अभाग्यका लोप हो जावेगा, तब इस विस्तृत संसारमें दुःख या अभाग्यके स्थान पर सर्वत्र प्रसन्नता, शांति और सुखका साम्राज्य हो जावेगा ।

उस समय ही सतयुग या रामराज्य प्रारम्भ होगा जिसकी हम सब प्रतीक्षा कर रहे हैं । उस समय न तो कोई ऐसा मादकपेय होगा जो पुरुषके पुरुषत्व एवं सौंदर्यको खा जावे और न ऐसे शराब-घर या कलवारकी दुकाने होंगी जहाँ निर्बल या इच्छा-शक्तिहीन व्यक्ति सरलतासे पहुँच सके ; न ऐसे कारखाने होंगे जहाँ पर युवा एवं पुरुष और स्त्रियोंके जीवनका आनन्द और आशा कुचल डाली जाती हो और जहाँ वे समयके बहुत पूर्व ही बूढ़े हो जाते हैं । इन्हीं वर्तमान कारखानोंमें आदर्शों को फाँसी पर लटका दिया जाता है और जीवन एक लम्बे स्वप्नकी भाँति रह जाता है । उस युगमें एक स्त्री उस समय तक रेशम और जवाहिरातसे अपने शरीरको नहीं सजावेगी जब तक कि कोई उसकी दरिद्र बहन गन्दे घरमें पड़ी सड़ रही हो और उसके शरीर पर लज्जा-निवारणका भी साधन न हो । हे भगवान, यह युग कब आवेगा ?

इस दुखी ससारपर आपकी कृपा कब होगी? यह तभी होगा जब ससारके स्त्री-पुरुष यह भली प्रकार समझ लेंगे कि भाग्य या सयोग नामकी कोई वस्तु नहीं है और उस अदृश्य स्वर्गमें कोई ऐसा निरकुश शासक नहीं है जो अपनी मनमानी करता रहता है एव यह कि हम सभी अपना जीवन स्वय बनाते हैं जैसा कि हम हैं और वह भी हमारे ही हाथमें है कि हम भविष्यमें क्या होंगे।

जो आज सताये जा रहे हैं, और पददलित हो रहे हैं उन्होंने भी अपने पूर्व जन्ममें किसीको सताया होगा क्योंकि मनुष्यको वही 'काटना पडता है जो उसने बोया है।'

जीवनका चक्र घूमता रहता है और हम भी उसके साथ घूमते रहते हैं। हमें आज क्या करना है? 'आज' के ही गर्भ से अज्ञात 'कल' का जन्म होता है। क्या हमें 'कल'को विपत्तिजनक बनाना है या इस नीरवता और अधकारमें उससे प्रकाशका काम लेना है? यम-राजके बहीखातेमें तनिक भी भूल नहीं हो सकती। उसका बाट और तराजू सही होता है।

इन बातों पर आपको मनन करनेकी आवश्यकता है।

साहचर्य एवं एकान्तवास

मनुष्यके जीवनमें एक ऐसा समय आ सकता है जब हमारे लिये सबसे बड़ी स्फूर्ति साहचर्य हो और उसके बाद ऐसा भी समय आ सकता है जब हमें एकान्तवासकी आवश्यकता पड़े और उसीमें उस समय साहचर्यकी अपेक्षा अधिक स्फूर्ति प्राप्त हो।

साहचर्य और एकान्तवास हमारे जीवनके विकासमें कितना काम करते हैं इसका अध्ययन करना बड़ा आनन्ददायक है। साधारण नियम यह है कि युवावस्थामें लोग एकान्तवाससे घृणा करते हैं और साहचर्य एव हमजोलियोंके साथ ही आनन्द प्राप्त करते हैं, उनको जवानी-

की मादकता और युवकोंके खेलमें भाग लेनेकी कामना रहती है। बीस वर्षसे कम आयुवाले बालक या बालिकाके सम्बन्धमें, किसी अस्वाभाविक बातके आजाने पर ही, यह बात कही जा सकती है कि वह अपने युवा हमजोलियोंका संग छोड़कर सदा अकेला रहना पसन्द करता है। यही होना भी चाहिये। यह बहुत आवश्यक है कि हम अपने प्रारम्भिक जीवनमें अपने साथियोंसे बहुत हिल-मिलकर रहें। मैंने यह बहुधा देखा है कि वे युवा जो अपने समवयस्क साथियोंसे पृथक रहने के लिये बाध्य किये गये थे, समय आने पर रोगी, सुस्त और निराशा-वादी हो गये। बच्चोंके माता-पिता एवं संरक्षक बहुधा यह भूल जाया करते हैं कि मानव-जीवनके लिये पेटकी क्षुधाके अतिरिक्त भी किसी प्रकारकी क्षुधा हो सकती है। मन और मस्तिष्कको भी भूख लगा करती है, सामाजिक और शारीरिक क्षुधा भी हुआ करती है। क्षुधाके उपर्युक्त सभी भेद स्वाभाविक और स्वास्थ्यप्रद हैं और इनकी तृप्ति भी स्वाभाविक और स्वास्थ्यप्रद ढंगसे होनी चाहिये। जब युवकोंको वह वस्तु नहीं प्राप्त होती जिससे उनकी उपरोक्त क्षुधाकी तृप्ति होवे, (यह क्षुधा आवश्यक और नितान्त सच्ची होती है) तब उनको उसके अनिवार्य परिणाम भोगने पडते हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे शरीरको भोजन न मिलने पर पीडा हुआ करती है।

चरित्र-निर्माणमें अनुभवका बड़ा भारी हाथ होता है। सबसे अधिक शुद्ध और श्रेष्ठ अनुभव तो वह होता है जो हमें अपने साथियोंके

कन्धेसे कन्धा मिलाकर काम करनेसे प्राप्त होता है। एक बालक या बालिका दिन-रात घरमें रहती है और अपने समवयस्क बालकोंके साथ नहीं खेलती। इसी कारण वे अभिमानी हो जाते हैं। यदि उन्हें एक ऐसी पाठशालामें भेज दिया जाय जहाँ वे बहुतसे बालकोंके साथ रहें तो आपको यह देखकर आश्चर्य होगा कि उनका अभिमान कितना जल्दी छूमंतर हो जाता है। उन्हें अपनी आलोचनाका ज्ञान होता है और इस प्रकार वे अपने दुर्गुणोंको भी भली प्रकार जान जाते हैं। यदि वे अपने हमजोली बालकोंके सम्पर्कमें न आते तो यह बात न होती। अनुभव ही उनका सुहृद अध्यापक बन जाता है। पहले उन्हें कुछ ठोकर लगती है, कभी-कभी वे मन मसोसकर रह जाते हैं, कभी-कभी वे रोते भी हैं और कभी विद्रोह कर बैठते हैं; परन्तु अन्तमें वे सच्चे जीवनका भेद समझ लेते हैं।

इसमें सन्देह करनेकी गुञ्जाइश नहीं है। विशिष्टतम महिलायें वही हैं जिन्होंने बचपनसे ही पुरुषोंके साथ रहना सीख लिया है। जीवनको स्वाभाविक, साधारण और स्वास्थप्रद समझनेके लिये आवश्यक है कि बालक और बालिकायें पाठशाला, स्कूल, और कालेज, घर या समाजमें एक साथ रहें। स्त्रीके जीवनकी सबसे बड़ी स्फूर्तियों में से एक स्फूर्ति एक सच्चे, पवित्र और स्वस्थ पुरुषके सौहार्द और साहचर्यसे प्राप्त होती है। दूसरी ओर बहुत शुद्ध और पवित्र मनवाले पुरुष उन बालकोंके विकासके फल हैं जो प्रतिदिन स्वस्थ, बल-

शाली, पवित्र, प्रसन्नचित्त और सुन्दर बालिकाओंके सम्पर्कमें रह आये हैं। स्त्री-पुरुषके सौहार्द और इसके द्वारा प्राप्त होनेवाली स्फूर्तिके विषयमे पहले ही कहा जा चुका है।

साहचर्यके कारण प्राप्त अनुभव मस्तिष्क और चरित्रके विकास-के लिए नितान्त आवश्यक हैं। किसी भी व्यक्तिके विकासकी आधार-भूत शिला युवा और किशोरावस्थामे पढते-खेलते और घरेलू जीवनमें अपने समवयस्कोंके सम्पर्कमे आनेपर प्राप्तहोनेवाली स्फूर्ति ही है। और यह आवश्यकता ऐसी है कि यदि अदूरदर्शी और मूर्ख गुरुजन इसके लिए बन्धन लगा देते हैं तब वे इसकी प्राप्तिके लिए अनुचित और धर्मविरुद्ध ढगसे प्राप्त करनेका प्रयत्न करते हैं जिसके कारण प्रसन्नता, स्फूर्ति और उन्नतिके स्थान पर क्लेश और अवनतिका आगमन होता है।

परन्तु हम सदा किशोर अथवा युवा नहीं रहते। और हमें अपने विकासके लिए युवावस्थाके अनुभवोंकी आवश्यकता नहीं रहती। ऐसा समय आ जाता है जबकि एकान्तवाससे प्राप्त होनेवाली स्फूर्ति भी उतनी ही आवश्यक हो जाती है जितना कि साहचर्य कुछ समय पूर्व था। युवावस्थामें एकान्तवाससे घृणा होती है और उस समय उससे कुछ भी स्फूर्ति नहीं मिलती। यह ठीक भी है। प्रौढावस्थाको एकान्तवासमें ही विशिष्ट स्फूर्ति प्राप्त हुआ करती है और यह भी उचित ही है।

बहुधा ऐसे युवक मिलते हैं जो देहातके एकाकी और नीरस जीवन-से ऊबकर शहरमे भाग आते हैं। उन्हें शहरके जीवन और उत्तेजक वायुमण्डलमें ही आनन्द मिलता है। वह नगरमे रहकर भूख बर्दाश्त कर सकता है अथवा प्राण-रक्षाके योग्य मजूरी पाकर संतोष कर सकता है, परन्तु देहातके सुन्दर, सम्पन्न परन्तु नीरस जीवनकी ओर जाना उसको अच्छा नहीं लगता। इसमें उसका दोष नहीं है। उसको वही लोग दोषी ठहरा सकते हैं जो मनुष्यके हृदयकी कामनाओं और आवश्यकताओं एवं विकासकी प्रवृत्तियोंको नहीं जानते। इसमें संदेह नहीं कि नगरके कोलाहल और धक्कम-धुक्के से प्राप्त होनेवाली स्फूर्तिकी भी कभी कभी आवश्यकता पड़ा करती है, परन्तु यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो पता चलेगा कि वही व्यक्ति जो किसी समय गाँवसे भागकर नगरमें आया था, अब अपने निर्वाहके लिये पर्याप्त धन संग्रह कर लेनेके बाद पुनः अपने गाँवको लौट जाता है। नगरमें रहनेसे उसका मन भर गया और उसने अनुभव भी प्राप्त कर लिया है। उसने जीवनके खेलमें भाग लिया और उसमें वह अपने साथियोंके साथ धक्कमधुक्का देकर खेलता रहा। असफलता और सफलताके बाद वह ऐसा विकसित होकर निकला है जिसके लिए देहातके एकान्त जीवनमें रहनेपर उसे अवसर नहीं मिलता।

अब वही अन्तर्मुखी दृष्टि, जो कि एकान्तवासका वरदान है, उसके लिये वास्तविक वस्तु बन गई है। अब वह वही वस्तु चाहता

है जिससे वह किसी समयमें भाग गया था—अर्थात् एकान्तवासकी स्फूर्ति। अब एकान्तवासमें उसे विचार करनेके लिये पर्याप्त सामग्री प्राप्त होती है। देहातके शान्त वातावरणमें वह जीवन एवं अनेक अनुभवोंपर गम्भीर मनन कर सकता है। यदि वह देहातसे भागा न होता तो वह वहीं पर सड-गल जाता। अनुभवकी कमीके कारण उसका जीवन प्राण-रहित होता, साहचर्यके अभावमें सहानुभूतिकी भावनाका जन्म उसके मनमें न होता और जीवनकी कठिनाइयोंके विरुद्ध सुन्दर पुरुषार्थ प्रदर्शन करनेका अवसर न मिलनेके कारण वह मोटा, सुस्त, आरामतलब और शक्तिहीन जीव रह जाता जो केवल नामके लिये जीवित रहता, परन्तु जीवनकी वास्तविकताओंके लिये वह मरेके समान ही रहता। ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत अधिक है।

महायुद्धके प्रारम्भमें अगस्त सन् १९१४ में क्या हुआ? सभी देशोंके युवकोंने इस युद्धका स्वागत किया। वे उस समयकी दैनिक क्रियासे ऊब उठे थे। वे अनुभव-द्वारा प्राप्त होनेवाली स्फूर्तिके लिये तडप रहे थे। वे अपने साथी, साहचर्य एव यात्रा तथा ससारके सम्बन्धमें जानकारी प्राप्त करनेके लिये व्याकुल हो उठे थे। युद्ध प्रारम्भ हुआ और उन्हें अवसर मिल गया। उनकी यह इच्छा नहीं थी कि मनुष्य-की हत्याकी जाय। सहस्रों उनमें ऐसे थे जो कि औरोंको मारनेकी अपेक्षा स्वय मरना अधिक पसन्द करते। परन्तु दूसरा कोई मार्ग ही नहीं था; इसीकारण उन्होंने उसका प्रसन्नता-पूर्वक स्वागत किया।—

साहचर्य एवं एकान्तवास

राबर्ट ब्रुक नामके कविने कहा है:—

'परमात्माके हम कृतज्ञ हैं जिसने हमें
वर्तमानके साथ लड़नेको तैयार किया है
और जिसने हमें निद्रासे जगाकर
नवयुवकोंको काममें लगा दिया है।
जिसने हमारे हाथोंको दृढ़ता, नेत्रोंको स्पष्टता
और शक्तिको महानता प्रदान की है
ताकि हम तैराकोंकी भांति प्रसन्नता-पूर्वक कूद पड़ें
उस दुनियासे अलग होकर,
जो पुरानी और शीतल पड़कर थक गई है।
हम उन दुखी लोगोंको छोड़ दें
जिन्हें प्रतिष्ठा तनिक भी हिला-डुला नहीं सकती
और उन पुरुषों तथा उनके गन्दे और मनहूस गीतोंको
और प्रेमके खोखलेपनको भी छोड़ दें।'

युवकोंकी तरह अंग्रेजी युवतियोंको भी युद्धसे मुक्ति और स्फूर्ति प्राप्त हुई। सहस्त्रों कन्याओंको वर्तमान नीरस जीवनसे घृणा हो गई थी और उनके लिये युद्धके कारण सेवाका नया द्वार खुल गया। वे अपने जीवनसे थक गई थीं और अपने सामाजिक व्यवहारसे घबड़ा चुकी थीं। अस्पतालोंमें घायलोंके सिरहाने, रेडक्रास सोसाइटीके डेरोंमें और अन्य स्थानोंमें उन्हें जीवनकी महान स्फूर्ति प्राप्त होती थी।

उन्होंने सेवाकी महत्ता समझ ली थी। उस समय देखने वालोंने देखा कि वहींपर वास्तविक नारीका विकास हो रहा है। उन्होंने अपने कोमल करों और सुन्दर नखोंका विचार छोड दिया था। वे भोजन बनाती थीं, बर्तन मलती थीं, कपड़े साफ करती थीं और सभी प्रकारके परिश्रम करती थीं। वे घायल सिपाहियोंकी पट्टी बाँधतीं और उन्हें प्रत्येक प्रकारसे प्रसन्न रखनेका प्रयत्न करती थीं। उनके मनमें केवल एक अनजान लालसा थी और वह यह कि किसी प्रकार स्फूर्ति प्राप्त हो—वे प्रसन्न थीं कि अन्तमें उन्हें जीवनका आनन्द प्राप्त हुआ। कितना अच्छा हुआ होता यदि महायुद्धमें नाश होनेवाले धनका चतुर्थांश इस बातके लिये व्यय हुआ होता कि युवकों और युवतियोंको जीवन और जवानीकी सभी शुद्ध कामनाओंकी पूर्तिका अवसर दिया जाय। तब—कौन कह सकता है!—युद्ध हुआ ही नहीं होता!!

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवनके एक भागमें मनुष्य एकान्तवाससे घृणा करते हैं फिर भी वह यह नहीं समझता कि ऐसा करने में वह प्रकृतिकी आज्ञाका पालन कर रहा है और विकासकी प्रेरणाके अनुसार चलता है। फिर ऐसा भी समय आता है जब वह उसी वस्तुको प्राप्त करना चाहता है जिससे उसने किसी समयमें घृणा की थी और इस प्रकार एकान्तवासकी स्फूर्ति प्राप्त करनेमे वह प्रकृतिके नियमका पालन कर रहा है।

कभी-कभी ऐसे युवक मिल जाते हैं जो विचार-मग्न और गम्भीर

रहा करते हैं। वे उत्कृष्ट आनन्द और स्फूर्तिके लिये एकान्तवास और ध्यानकी शरण लेते हैं। हमें इन लोगोंके प्रति मनमें भ्रम पैदा नहीं होने देना चाहिये। वह एक महान व्यक्ति है। उसने इस ससारमें मनुष्य-समाजकी सेवा करनेके लिये जन्म धारण किया है। वह पुरुषार्थी, बलशाली, फुर्तीला, सत्साहसी, और प्रत्येक विपत्तिके समय पर्वतकी भाँति अचल रहेगा। उसके लिये एकान्तवासमे मनुष्यके साहचर्यसे अधिक स्फूर्ति प्राप्त होगी। इतिहासमे इस प्रकारके उदाहरण भरे पड़े हैं। भगवान बुद्ध युवावस्थामें अपने साथियोंसे पृथक बैठकर जीवन और इसके रहस्यपर मनन किया करते थे। महात्मा ईसा बारह वर्षकी अवस्थामें धर्माचार्योंसे बहस करते थे। हमारे कालमें भी हर्बर्ट स्पेन्सर और जेम्स अलेन आदि हुए हैं। इन लोगोंको एकान्त क्यों प्रिय था? उनके कर्त्तव्य-के लिये जिस स्फूर्तिकी आवश्यकता थी वह उन्हें एकान्तमें ही प्राप्त हो सकती थी।

भगवानसे हमें प्रार्थना करनी चाहिये कि वह हमें ऐसा ज्ञानी बना दे ताकि हम यह जान सकें कि कब एकान्त सेवन करना और कब साहचर्यका आनन्द उठाना चाहिये। दोनोंका ही स्थान और काल भिन्न प्रकारका होता है।

व्यथा

'अब आपको व्यथित होना होगा, परन्तु आपकी व्यथा प्रसन्नतामें परिवर्तित हो जावेगी।'

क्या व्यथासे भी स्फूर्ति प्राप्त हो सकती है? हाँ, कभी-कभी व्यथासे ही उत्कृष्ट स्फूर्ति प्राप्त हुई है। जिस व्यक्तिको व्यथाकी तनिक भी अनुभूति नहीं हुई है वह स्फूर्तिके सम्बन्धमें भी निरा अज्ञानी है।

व्यथा जीवनकी महान घटना है। कारण यह है कि कोई भी इससे अछूता नहीं बचता। व्यथा युवावस्थाके अनुभवको नहीं कहते हैं, यह दीर्घजीवनका परिणाम नहीं है और न यह उन लोगोंके लिए ही सुर-

छिन रखी गई है जो धीरे-धीरे मृत्युकी गोदमें पहुँचते जा रहे हैं।

इसलिए जिस वस्तुसे कोई बच नहीं सकता, जो जीवनमें कभी भी किसीके पास पहुँच सकती है और जिसका ज्ञान बालक, युवा और वृद्ध सभीको है, वह निश्चय स्फूर्ति-दायक होगी। निश्चय है कि इसमें इतनी अधिक स्फूर्ति है जिसका हम स्वप्न भी नहीं देख सकते।

कौन कह सकता है कि व्यथाका प्रारम्भ कब होता है ? हम सभी जानते हैं कि बचपनकी व्यथायें भी कितनी कटु, गम्भीर, असह्य और मार्मिक हुआ करती हैं। कितने दुःखकी बात होगी यदि हम यह भूल जावें कि किसी बालकको भी व्यथासे पीड़ा हो सकती है। बड़ी आयु और अनुभवके ज्ञानके कारण हम अपने बचपनकी व्यथाओंको समझ सकते हैं और कभी-कभी उनका विचार करके मुस्करा भी सकते हैं फिर भी हमें अपने बच्चोंकी व्यथासे घृणा नहीं करनी चाहिये। उनकी व्यथा किसी प्रकार कम पीड़ा देने वाली नहीं होती और न उनके हृदयकी वेदना इस कारण ही कम हो जाती है कि हम उसे भली प्रकार देख नहीं पाते। क्या आपको यह स्मरण नहीं है कि एक व्यथित बालक कितनी निःसहायता अनुभव करता है ? उतना निःसहाय तो लोग बड़ा होने पर भी अपनेको नहीं पाते। बात यह है कि छोटा बालक अपनी व्यथा किसीसे कह नहीं सकता। वह माता जो विपत्तिमें सदा-सहायक थी, जो अपने कोमल करोंसे स्नेहपूर्वक हमारे आँसू पोंछा करती थी और जिसकी मधुर और स्निग्ध वाणी व्यथित हृदयके लिये

मरहमका काम देती थी, वह माता भी हमारी कठोर व्यथाओंको नहीं जान सकती। कारण यह है कि हम उसे स्वय इतनी अच्छी तरह नहीं समझ पाते कि उसे शब्दोंमें व्यक्त कर सकें। यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि बच्चोंको भी व्यथा हो सकती है। ज्योंही हम होश सम्हालते हैं त्योंही हमें व्यथाका अनुभव प्रारम्भ होता है। क्या आपको स्मरण है कि ज्योंही आप अपने अस्तित्वका ज्ञान प्राप्त करते हैं त्योंही आपको एकाकीपनकी व्यथा सताना प्रारम्भ कर देती है। पहले भय पैदा होता है—भय ऐसी बातका जिसे हम स्वय नहीं जानते। फिर हम सदा अपना अस्तित्व अनुभव करते रहते हैं और बिना समझे हुए हम व्यथित होते हैं, तिसपर भी हम नहीं जानते कि व्यथासे ही जीवनकी स्फूर्तिका प्रारम्भ होता है। परन्तु यदि व्यथाको हम समझ न पावें तो भी व्यथा कम कष्टदायक नहीं होती। पीड़ा तो अधिक बढ जाती है। आज हम व्यथित होते हैं और समझते भी हैं, परन्तु अतीत शैशव-कालमें हम व्यथित होते हुए भी यह समझ नहीं पाते थे। आप किसको अधिक सह्य समझते हैं? भगवान हमें इतना सहृदय बना दे कि हम बच्चोंकी व्यथाओंका अनुमान लगा सकें।

ज्यों-ज्यों समय व्यतीत होता जाता है त्यों-त्यों हमें यह ज्ञान होता जाता है कि इस जीवनमें हम कभी भी व्यथासे वंचित नहीं रह सकते। जब बचपनको छोड़कर हम किशोरावस्थामें प्रवेश करते हैं तब हम मूर्खता और अज्ञानकी अनेक धारणायें छोड देते हैं। तब हम छोटी

बातोंके लिये नहीं मचलते और न छोटीसी हानि परही—चाहे कल्पित ही क्यों न हो—रोने लगते हैं। परन्तु व्यथा हमारे साथ युवावस्थाके बसन्तोत्सवमें भी पहुँच जाती है। इस प्रकार हम यह जान जाते हैं कि व्यथाका अन्त बचपनके साथ नहीं होता। फिर भी हम अच्छी प्रकार नहीं समझ पाते और हम व्यथा, विपत्ति और दुःख एवं कष्टको एकमें ही मिला देते हैं। प्रौढ हो जानेपर हमें व्यथा और असन्तोष, व्यथा और विपत्ति एवं व्यथा और कष्टका अन्तर समझमें आता है। क्या आपने कभी ऐसा देखा है जब कष्ट और सुख एकही साथ हृदयमें निवास कर रहे हों? क्या आपने कभी एक ही जीवनमें विपत्ति और सुखको एक साथ रहते देखा है? मैं समझती हूँ नहीं। परन्तु महान व्यथाके साथ अनन्त शान्ति, अविकल प्रसन्नता तथा श्रेष्ठ सुख हमने बहुधा पाया है।

कुछ दिन पूर्व मुझे एक ऐसी महिला मिली थी जिसे हाल हीं में एक महान व्यथाको सहन करनेका अवसर मिला था। उसका पुत्र—प्रथम पुत्र—मर गया था। वह अभी अच्छी प्रकार युवा नहीं हो पाया था, तभी मर गया। उस विधवाको उसीका सहारा रह गया था; वह भी जाता रहा। उसने मुझसे कहा—'जब मेरा प्यारा बेटा मर गया तब मैंने भगवानके हाथसे नारी-व्यथाका ताज ले लिया।'

प्रसन्नता मनुष्यके हृदयका स्वत्व है और यही मनुष्यकी सच्ची अवस्था है। पशु भी भोजन और घर प्राप्तकर लेनेपर प्रसन्न होते हैं

और यह यदि न मिले तो उन्हें कष्ट, पीड़ा और विपत्ति सहनी पडती है। परन्तु यह नहीं कहा जाता कि पशुको व्यथा हो रही है। व्यथाही मनुष्यमें ईश्वरीय शक्तिका चिन्ह है। इसी विचारसे हमें स्फूर्ति प्राप्त होगी ,क्योंकि यही मानव-जीवनकी महान घटना है। हमें इस सार्वजनिक चक्र के अनुसार चलना पडता है और हमारी व्यथा ससारकी व्यथाका एक अश है।

कुछ लोग स्वभावत पूछेंगे—'व्यथा सबके भाग्यमें क्यों डाल दी गई? यही जीवनकी महान घटना क्यों है?'

बात यही है कि व्यथाके ही कारण धर्मकी आवश्यकता पडती है। बिना व्यथाके मानव-हृदय ईश्वरकी खोज नहीं करता। इसप्रकार व्यथाके ही कारण हम ऐसी जगह पहुँच जाते हैं जहाँ व्यथाका नाम नहीं है।

एक प्राचीन महात्माका कहना है, 'व्यथा हँसीसे अच्छी है क्योंकि उदास वदनसे मनको खुशी होती है।' यदि व्यथाको अच्छी तरह समझ लिया जावे और साहसके साथ उसको सहन किया जावे तो शान्ति मिलती है, स्थायी प्रसन्नता प्राप्त होती है और स्त्री-पुरुषोंके मनको अध्यात्मिक सुख प्राप्त होता है। 'सत्य व्यथामेंसे प्रसन्नताको और अशान्तिमेंसे शान्तिको बाहर निकाल लेता है।'

यदि व्यथाने हमारे हृदयको पवित्र न कर दिया होता तो पता नहीं हम आज कितने दरिद्र, नीच और अनुदार होते। व्यथाके ही

कारण हम दुनियाके कष्टको समझते हैं व्यथाके ही कारण हम सहानुभूति करना सीखते हैं। यदि हम व्यथासे अपरिचित होते तो आशासे भी अपरिचित रहते। यदि हम व्यथाको न जानते तो हम इस मांसपिण्डमें रहनेवाले हृदयमें उन ईश्वरीय तत्त्वोंका रूप नहीं देख पाते जिन्हें हम कष्ट-सहिष्णुता, दयार्द्रता, सौजन्य, न्याय, निष्कपट, शान्ति और प्रेमके नामसे पुकारते हैं। ये सभी व्यथाके फल हैं।

कविने कहा है :—

अपने जीवनको लाभके बजाय हानिके बाटोंसे तौलो
कारण कि प्रेम-भक्तिकी कसौटी प्रेम-बलिदान है
जो जितना ही अधिक व्यथित होगा,
वही अधिक सुखी भी होगा।

परन्तु व्यथासे विपत्ति, अंधकार, दु:ख और कष्टमें नहीं मिलना चाहिये। यदि ऐसा किया जायगा तो आप इसका सच्चा अर्थ नहीं समझ सकेंगे। और न जीवनमें कभी उसका सच्चा मूल्य आँक सकेंगे।

क्या यह सत्य नहीं है कि हम व्यथाकी पीड़ा सहन करके ही उल्लसित होते हैं? यह उन आश्चर्यपूर्ण उलटी बातोंमेंसे एक है जो जीवनको चमत्कारपूर्ण और सुन्दर बना देती है। प्रसन्नता व्यथाका पुत्र है; परिश्रम करनेपर ही मजूरी मिलती है, एकाकीपनसे ही हम सहानुभूति और सौहार्दका पाठ पढते हैं, कठोरता सहन कर लेनेपर

ही सिपाही बहादुर बनता है, बिना मृत्यु या विपत्तिके कोई महान् नहीं होता, और बिना युद्धके हम शान्तिका आनन्द नहीं प्राप्त कर सकते।

प्रायश्चितके साथ व्यथाका नित्यका सम्बन्ध है। उन आनन्दोंको प्राप्त करने के लिए जिनके लिए प्रायश्चितकी आवश्यकता नहीं है हमें व्यथाके एकाकी और निर्जन जगलको पार करना पड़ेगा। परीक्षा-काल सदा कष्ट-प्रद रहा है परन्तु बिना तपाये सोनेकी परीक्षा भी नहीं होती। इसीप्रकार व्यथा हमें प्रसन्नताके प्रातमें पहुँचा देती है। व्यथाके ही कारण मनुष्य असीम सुख प्राप्त करता है। कारण कि व्यथाके कारण मनुष्यका हृदय सत्यके अति समीप पहुँच जाता है।

आज ससारमें सर्वत्र व्यथाका साम्राज्य है। परन्तु फिर भी कितने ऐसे हैं जो इससे स्फूर्ति प्राप्त कर रहे हैं। भगवान करें कि व्यथा हमारे हृदयको पवित्र कर दे। हमारे कठोर हृदयको द्रवित करके उसमें नम्रता और सहानुभूतिका मिश्रण कर दे, इससे पृथकता और सकीर्णताकी वे भयानक सीमायें टूट जावेंगीं जो प्रत्येक हृदयको मिलने नहीं देती और भ्रातृभावके मार्गमें रोड़े अटकाये हुए हैं। यह हमारी लघुता और असमर्थता प्रकट करती है। इससे यह भी प्रकट होता है कि शक्ति, मान और आनन्द प्राप्त करनेका हमारा अनन्त प्रयत्न कितना निष्फल और निरर्थक है। इससे हमें यह सीखना चाहिये कि किसी वस्तुका मूल्य कैसे आँका जा सकता है। इससे हमें उस धर्मकी शिक्षा मिलती है जो मदिरों, मसजिदों और गिरजाघरों

एवं पुस्तकोंमें बन्द नहीं है और जिसका एकमात्र निवास मनुष्यके हृदयमें है।

प्रिय पाठको, यह नहीं समझना चाहिये कि मैं व्यथित जीवन व्यतीत करनेकी सलाह दे रही हूँ। भगवान ऐसा न करें। मैं व्यथाकी कहानी इसलिये लिख रही हूँ कि यही आज सबसे अधिक सत्य कहानी है। मैं आपको व्यथित रहनेके लिये सलाह नहीं दे रही हूँ परन्तु यह स्मरण दिलानेके लिये कि, 'जो दुःखीके दुखको देखकर व्यथित होते हैं वे धन्य हैं क्योंकि लोग उनके लिये भी दुःख अनुभव करेंगे।'

स्फूर्ति हेतु विचार

मनन और इसका प्रभाव, इस शक्तिकी मनुष्यके भाग्य-निर्माण और अपने समीपवर्तियोंके सम्बन्धमें हमारा उपयोग या दुरुपयोग, ऐसे विषय हैं जिसपर हमें गम्भीर विचार करनेकी आवश्यकता है। इसके अदृश्य शक्तियोंमेंसे एक होनेके कारण बहुसख्यक लोग इसका पूरा महत्त्व नहीं समझते ; और इस बातको तो वे अज्ञान और अंधविश्वास-का कुपरिणाम समझेंगे कि हम किसी बातके सम्बन्धमें सोचकर अपने जीवनको इच्छानुसार सचालन कर सकते हैं।

आश्चर्यपूर्ण होते हुए भी यह सत्य है कि लोग अज्ञानी कहा जाना

अधविश्वासी कहे जानेसे अधिक पसद करते हैं। ऐसे लोग भी मिलेंगे जो मस्तिष्क और इसकी शक्ति सम्बन्धी प्रत्येक वातको नितान्त अध-विश्वास मानते हैं। वास्तविक वात तो यह है कि आज जिस वातको हम अधविश्वास माने वैठे हैं वही कल विज्ञानका रूप धारण कर लेती है।

कहा है, 'शक्तिका आदि कारण विचार है।' शक्ति और विचार समान ही हैं और शक्ति मस्तिष्क द्वारा पैदा होती है। अव इस वातकी धारणा वनाकर कि विचार और शक्ति बराबर ही है, हमारी समझमें यह वात सरलतापूर्वक आजायेगी कि विचार करनेवाले होनेके कारण हम कितने वड़े शक्ति-केन्द्र हैं। विचार-शक्तिपर लम्बा लेख लिखनेका मेरा विचार नहीं है। मुझे इस विषयपर कुछ साधारण वार्तिक लिखना है ताकि आप इसका प्रभाव अपने जीवन और अनुभवमें देख सकें।

मेरा अनुभव है कि विचार करनेके तीन ढग हैं और विचारके भी तीन भेद हैं। उदाहरणार्थ, हम अपने अनुपस्थित मित्रके सम्बन्धमें वात करते हैं; हम अपने अनुपस्थित मित्रसे लेखनी द्वारा वात-चीत करते हैं और हम अपने मित्रसे साक्षात वार्तालाप करते हैं।

परन्तु इसका विचार और विचार करनेसे क्या सम्बन्ध है? ठीक उपर्युक्त ढगसे हम अपने स्वजनके सम्बन्धमें विचार कर सकते हैं • हम अपने प्रियजनोंके पास अपने विचार भेज सकते हैं; और हम

अपने विचारोंके विमानपर सवार होकर अपने प्रियजनके सम्मुख उपस्थित हो सकते हैं और हम उसे प्रसन्न, उत्साहित, शक्तिपूर्ण और कष्ट-सहिष्णु बना सकते हैं।

अपने किसी प्रियजनके सम्बन्धमें विचार करना बहुत सुन्दर और आनन्ददायक है, परन्तु हमें यह निश्चय नहीं होता कि हम जिसके विषयमें विचार कर रहे हैं उसपर कितना प्रभाव पडता है। हमारा विचार हमारे स्पष्ट दृष्टि-क्षेत्रसे आगे नहीं बढता और यद्यपि वे सुन्दर और मधुर होते हैं फिर भी उनमें इतना बल नहीं होता कि वे लक्ष्य-पर पहुँच सकें। मैं यह नहीं कहती कि उनसे उसे प्रसन्नता और आनन्द प्राप्त हो ही नहीं सकता, जिसके विषयमें विचार किया जाय, कारण कि प्रत्येक प्रेमपूर्ण और सुन्दर विचार दुनियाके लिए एक रत्नके समान है और यदि किसी भूले-भटकेके भी हाथ लग जावेगा तो उसे प्राप्त करनेवालेको प्रसन्नता और आनन्द प्राप्त होगा। रत्न कभी छिपा नहीं रह सकता। परन्तु दूसरोंके विषयमें सोचनेका गुण सभीमें पाया जाता है और विचार-शक्तिके योगमें पहली सीढ़ी है।

दूसरी सीढीको हम दूसरोंके पास विचार भेजना कह सकते हैं जो हमारा प्रिय है अथवा जिसकी हम सहायता करना चाहते हैं। इच्छा-शक्तिसे इस प्रकारकी क्रिया करना बहुत दिन तक अभ्यास और चित्तको एकाग्र करनेपर निर्भर करता है। इस तरह यह स्पष्ट हो जायगा कि किसीके सम्बन्धमें विचार करना और किसीके पास अपना

विचार भेजनेमें महान अन्तर है। पहलेको शक्तिहीन विचार कहते हैं और दूसरेको शक्तिपूर्ण। परन्तु जैसा कि पहले कहा जा चुका है यह चित्तकी एकाग्रता और अभ्यासके विना नहीं हो सकता।

मनुष्यके भीतर जितने प्रकारकी शक्तियाँ हैं सबको प्रकट करना पड़ेगा। किसी भी कलामें पूर्णता प्राप्त करनेका एकमात्र साधन लगातार आवृत्ति और सीधे तौरसे उसका प्रयोग करना है। संगीताचार्य होनेके पूर्व कई वर्ष तक लगातार अभ्यास करना पड़ेगा। चित्रकार जब अपना आधा जीवन व्यतीत कर लेता है तब कहीं उसका चित्र कला-पूर्ण होने लगता है यही बात विचार करनेकी शक्तिके सम्बन्धमें भी है। अर्थात हमें अपनी आश्चर्यपूर्ण मनःशक्तिका प्रयोग करनेके लिये निरंतर अभ्यास करनेकी आवश्यकता है। इसकी सफलता दीर्घ काल तक निरतर विचार और अभ्यास करने पर ही निर्भर करती है।

यदि आपने अपने मनका प्रयोग चेतन विचार अथवा एकाग्रताके लिये नहीं किया है तो आपको यह कल्पना नहीं करनी चाहिये कि आप भी अपने मनका उसी तरह प्रयोग कर सकते हैं जिस प्रकार कि वह व्यक्ति जो दीर्घकालसे ध्यान और एकाग्रतासे अपने मनकी साधना करता रहा है। यह भी उचित नहीं है कि आप थोड़े ही कालमें लाभकी आशा करने लगें और यदि चिरकाल तक आपको कठिनाइयाँ अजय प्रतीत हों तो निराश भी नहीं होना चाहिये। जब हम मनपर अधिकार करना चाहते हैं तब यह उस बछड़ेकी तरह रहता है जो

जोतनेके लिये अभी निकाला नहीं गया है। और उसे काममें लाने एवं इच्छानुसार काम करानेके लिये यह आवश्यक है कि उसके साथ परिश्रम करके दृढतापूर्वक उससे काम लिया जाय और कठिनाइयोंके आ पड़नेपर भी उसे छोड़कर निराश न हो जाया जावे। मनः शक्तिकी इस दूसरी सीढीपर पहुँचना लाभदायक है। सम्भव है कि वहाँ पहुँ-चनेमें कई वर्ष लग जायँ जबकि हम चेतन होकर इच्छानुसार अपने किसी दूरस्थित प्रियजनके समीप अपना कोई प्रेमपूर्ण अथवा सहायक विचार भेज सकें और हमें विश्वास रहे कि यह अपने लक्ष्यपर पहुँचेगा। परन्तु यदि इस अवस्थाको प्राप्त करनेमें अपना एक या कई जीवन भी व्यतीत करना पड़े तो भी यह लाभदायक ही होगा।

कुछ लोग कह सकते हैं कि यदि प्रेमपूर्ण और कल्याणकारी विचार अपने लक्ष्यपर पहुँच सकते हैं तो क्या घृणित और नाशकारी विचार अपने लक्ष्यपर नहीं पहुँच सकते? यदि ऐसी बात हो तब तो दुष्ट प्रकृतिवाले मनुष्योंके हाथमें एक भयानक अस्त्र आ जाता है। पहले तो मैं यही विश्वास नहीं करती कि दुष्ट प्रकृतिवाला व्यक्ति कठोर परिश्रम, निरतर प्रयोग और अथक प्रयत्न करके मनकी उस दशाको प्राप्त करनेकी इच्छा करेगा। दुष्ट प्रकृतिवाले सरल और सुलभ अस्त्रोंका ही प्रयोग करते हैं यथा निन्दा, गप्प और हिंसात्मक प्रवृति। कहा हैं, 'सत्य और न्यायका इतना कठोर नियम है कि कोई उसके मार्गको न तो बदल सकता है और न कोई रोक सकता है।

इसी नियमके अनुसार कसाई अपने कलेजेमें छुरी भोंकता है और अन्याय करनेवाला न्यायाधीश अपने रक्षकसे भी हाथ धो बैठता है। झूठ बोलनेवाला अपने आपको धोखा देता है और चोर एवं डाकू अपनी ही सम्पतिको चोरो और डाकुओं को सौंप देते हैं।' जो व्यक्ति किसी के सम्बन्धमें कुचिन्तन करता है वह स्वय अपना जीवन नष्ट करता है।

यद्यपि किसी निश्चित ध्येयके अनुसार विचार करना और दूसरेकी शुभ चिन्ता करना सुन्दर और श्रेष्ठ है फिर भी एक ऐसी वस्तु है जो इससे भी अधिक सुन्दर और श्रेष्ठ है। हो सकता है, उसे बहुत कम लोग प्राप्त कर सकते हैं। क्योंकि वह बहुत मँहगी है। उसके लिये घोर तपस्या और उद्दाम कामना एव कई जन्म तक एकाग्रता और ज्ञानपूर्ण ध्यानकी आवश्यकता पड़ती है। वह वस्तु है अपने प्रिय अथवा शुभ चिन्तितजनके पास अपने विचारों द्वारा स्वयं पहुँचना ताकि हमारे बीच कोई ऐसी वस्तु न रह जावे कि जिससे किसी प्रकारका अन्तर पडे और हम अपने विचारोंके द्वारा ससारकी सर्वोत्तम वस्तु—प्रेमो-पहारके रूपमें दे सकें। जब मनकी यह अवस्था होती है तब विलगावके लिये कोई स्थान ही नहीं रह जाता है। हम अपने मनमानसमें अपने उस प्रियजनकी उपस्थिति देखते हैं, जिसके ध्यानमें हम मग्न रहते हैं। हमारे पर उनका प्रभाव पड़ता है, हम उनका भावपूर्ण वदन देखते हैं और कभी-कभी उनके शब्द भी सुनाई देते हैं। मैंने ऊपर कहा है कि

'जिसके ध्यानमें हम मग्न रहते हैं' और इन्हीं शब्दोंमें मेरे कथनका सार भरा पड़ा है। मन ही सब कुछ है। हम ईश्वरीय चेतना अथवा विश्वव्यापक मनसे पृथक नहीं हो सकते, हम उसीके अग हैं। स्थूल मनकी कल्पनाको ही काल और स्थानके नामसे पुकारते हैं और जो लोग इस बातको जानते हैं वे ही पूर्वोक्त बातको भी समझ सकते हैं। परन्तु इनका ईश्वरीय चेतना अथवा विश्वव्यापक मनमें कोई अस्तित्व ही नहीं है।

यह ऐसा ज्ञान है जिसका द्वार सबके लिए खुला है। क्या यह प्रयत्न करके प्राप्त करनेके योग्य नहीं है? वास्तवमें इसका विचार ही स्फूर्तिदायक है। यह कितना स्फूर्तिदायक है कि हम अपने प्रेमीके सम्बन्धमें इस प्रकार ध्यान कर सकते हैं ताकि हम उसके समीप पहुँच जावें और अपने साथ सारा स्नेह सौजन्यता, शुभकामना और सहायता, जो हम उनपर न्यौछावर करना चाहते हैं कर दें।

महात्मा ईसाने भी इसी आशयसे कहा था 'मैं सदा तुम्हारे साथ हूँ—प्रलयकाल तक तुम्हारे साथ रहूँगा।'

जिसे हम मृत्यु कहते हैं!

पिछले अध्यायके लिखे जानेके पश्चात् एक व्यक्तिने जिसने उसे पढा था, लिखा, 'मेरा ख्याल है कि मैं आपकी उन बातोंको समझ सकता हूँ जो आपने प्रेमपूर्ण विचारोंकी शक्तिके सम्बन्धमें लिखा है और जिनसे हम अपने स्नेही बन्धुओंकी सहायता कर सकते हैं। मैं यह भी समझ सकता हूं कि हम अपने विचारोंके द्वारा अपने प्रेमीके समीप या उसके सम्मुख पहुँच सकते हैं ताकि हमारे और उसके बीच कोई अन्तर न रह जावे और हम उसपर अपना सारा स्नेह, शुभकामना और सहानुभूति न्यौछावर कर दें। परन्तु—उफ ! यह मेरे जीवनका सबसे

बड़ा 'परन्तु' है—यह तो बताइये कि वह अकथनीय वस्तु—धैर्य, शान्ति और सहानुभूति प्रदान करनेमें अकथनीय—उसके आगे भी जिसे हम मृत्यु कहते हैं पहुँच सकती है ?'

यदि इसमें कुछ भी वास्तविकता और सत्य है तो यह उस समय भी उतना ही सत्य और वास्तविक है जब कि हमारे स्नेही जन मृत्युके उस पार पहुँच जाते हैं जितना कि उस समय जब कि वे मर्त्यलोकमें थे। समझनेकी बात यह है कि पुरुष या स्त्रीका स्थूल शरीर ही वास्तविक पुरुष या स्त्री नहीं था, यह तो उनकी सांसारिक यात्राका वेष मात्र था, यह आत्माका मन्दिर था, आत्मा तो दूसरी ही वस्तु थी। जब वह आत्मा इसे छोड़कर दूसरी जगह चली गई तब यह शरीर बेकार हो गया और उस आत्माको वहाँकी परिस्थितिके अनुसार दूसरे शरीर-की आवश्यकता पड़ी।

यह नहीं कहा जा सकता कि 'नया' शरीरका यह आशय है कि यह पहलेपहल धारण किया गया है। यह सम्भव नहीं है। आत्मा अजर-अमर है और जीवन अनन्त है। इसी कारण मनुष्य उस आध्या-त्मिक शरीरमें सदा बना रहता है चाहे वह मर्त्यलोकमें ही क्यों न हो। यह सम्भव है कि उसे अपनी नई परिस्थितिके अनुसार सुन्दर वस्त्र या शरीर धारण करनेके लिए प्राप्त हो जिस प्रकार कि इस संसारके लिए यह हाड़-मांसका पिण्ड आवश्यक था। परन्तु हमारा इसीसे मतलब नहीं है। हमारा आशय तो अपने उन स्नेही जनोंसे है और इस बातसे है कि

आप-हम उनके समीप पहुँचकर उनके सुख-दुःखके भागी बन सकते हैं।

जिस वस्तुको हम मृत्युके नामसे पुकारते हैं उसके उस पार भी स्त्री-पुरुष देखे गये हैं और इसमें किसीको सन्देह नहीं होना चाहिये। इस बातमें सन्देह करना धर्मशास्त्रोंमें ही सन्देह करनेके बराबर न होगा वरन् अतीत, मध्यकालीन और वर्तमान ऋषियोंका अपमान और उनकी बुद्धिमत्तामें सन्देह करनेके समान है। मान लीजिये मेरे या आपके भाग्यमें वह दर्शन बदा न था; परन्तु इसी कारण यह कहना कि 'मुझे विश्वास नहीं है' हमारी क्षुद्रता, ईर्ष्या और अज्ञानका द्योतक होगा। हम लोग बाइबिलमें पढते हैं कि टामसको यह विश्वास नहीं हुआ कि ईसाको मृत्युके पश्चात् उसके शिष्योंने देखा और तब ईसने, कहा—'वे लोग धन्य हैं जिन्होंने देखा नहीं फिर भी विश्वास करते हैं।

हमारे स्नेही जो उस पार चले गये हैं आज भी उतने ही जीवित हैं जितने कि उस समय जब कि हम अन्तिम बार उनके पास अपने विचारोंके द्वारा पहुँचे थे। इसका हमें पक्का विश्वास करना चाहिये। प्रिय पाठक! यह तो बताइये कि जब आपका प्रेमपात्र इस संसारमें था तब आपके शरीरका कौनसा अंग उसके पास गया था? क्या आपका स्थूल शरीर गया था? नहीं! बिल्कुल नहीं!! अपने प्रेमपात्रके किस अंगके पास आप पहुँचे थे? क्या उसके स्थूल शरीरके पास? नहीं! कदापि नहीं!! आपकी आत्मा या मन उसकी आत्मा या मनके पास गया था। आत्माने आत्माको प्रभावित किया और मनने मनको। मन

और आत्माको हाड-मासका पिण्ड रोक नहीं सकता। और आत्माको संसारका कोई स्थूल पदार्थ आत्माके पास जानेसे नहीं रोक सकता।

हमें यह कदापि नहीं भूलना चाहिये कि काल और स्थान केवल मर्त्य व्यक्तिकी कल्पना है। आत्माके लिये इनका कोई अस्तित्व नहीं है। अपने स्थूल शरीरमें रहते हुए हम उस समय तक काल और स्थानके विचारसे सीमित रहते हैं जब तक कि हम उससे ऊपर नहीं उठ जाते। धर्मशास्त्रोंमें इसके प्रमाण अनेक स्थानोंपर मिलते हैं। यह भी हमें नहीं भूलना चाहिये कि स्थूल भावनाओंके लिये ही शरीर का अस्तित्व है। जब मनुष्य इस हाड-मासके पिण्डसे बाहर निकल जाता है तब उसका स्थूलतासे कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता। उसके आत्मिक शरीरका कोई बन्धन नहीं है और न उसका रास्ता ही रुका हुआ है।

कुछ लोगोंको शंका हो सकती है। 'क्या मृत्युके उस पार जाने-वाले भी ठीक उसी तरहके हैं जैसे वे यहाँ थे? क्या उनके प्रेमकी ज्वाला अभी भी जल रही है? क्या उनकी स्मृति अभी भी बनी हुई है?' मैं पूछती हूँ, 'क्या आपको सन्देह है?' यही बात महात्मा ईसा अपने भक्तोंको सिखाना चाहते थे। जब उनको समाधि दी जानेवाली थी तब मेरी उनके मृत शरीर पर उबटन लगाने गई। उसे यह आशा नहीं थी कि वह उन्हें देखेगी। जब उसने किसी व्यक्तिको दूरसे देखा तो वह समझी कि यहाँका माली होगा। परन्तु जब उसने सुना

कि कोई उसीका नाम लेकर पुकार रहा है तब उसने पहचान लिया कि यह महात्मा ईसाके अतिरिक्त कोई नहीं है। कारण कि उतने स्नेह, उतनी प्रसन्नता और उतने मधुर शब्दोंका उच्चारण कोई कर ही नहीं सकता था। जिस प्रकार उन्होंने 'मेरी' शब्द कहा उस प्रकार कोई नहीं कह सकता था। क्या इस घटनासे मेरीके मनमें वही स्नेह, सौम्यता और सुहृदयता नहीं जाग पडी ? उनकी यही इच्छा थी कि उसे विश्वास हो जावे कि वे समाधि लेनेके पूर्व जैसे थे ठीक वैसे ही अब भी हैं, वास्तव में उनका प्रेम इतना गम्भीर और निश्च्छल था कि मृत्युके बाद भी नहीं बदल सका। प्रेम अथवा प्रेमकी क्रिया कभी नहीं रुकती। इस विचारसे कितनी स्फूर्ति प्राप्त होती है! प्रेम और प्रेमकी क्रिया सदा अग्रसर होती रहती है। हमारे स्नेही जनोंको हमारे 'स्नेहकी' उतनी ही आवश्यकता आज भी बनी हुई है जितनी कि उस समय थी जब वे साकार हमारे समीप थे। उनकी इच्छा है कि अब भी हम अपने प्रेम पूर्ण कोमल कामनाओंका सन्देश उनके पास भेजें। यद्यपि सांसारिक बन्धनोके कारण हम उनकी प्रकट सेवा नहीं कर सकते जैसा कि हम साथ रहकर उनकी सेवा करते थे फिर भी प्रेम ऐसी वस्तु है जो हमें सेवाका प्रशस्त मार्ग सुझा देगा ताकि हम उन लोगों की सेवा कर सकें जो हमारी पहुँचसे भी परे हैं।

इस पुस्तकके पाठकोंमेंसे अनेक ऐसे होंगे जिनके कुटुम्बका कोई व्यक्ति योरूपीय महायुद्धमें मारा गया होगा। इसी विचारसे शान्ति

ओर धैर्य प्राप्त करनेका प्रयत्न करिये। परन्तु चिन्ताकुल या व्यग्र होकर अपने ही अनुभवसे कुछ मत प्रमाणित करिये। चिन्ता और व्यग्रता मानसिक और आध्यात्मिक परिस्थितियोको बदल देते हैं। वे मनके चारो ओर अन्धकारका घटाटोप फैला देते हैं। इसी प्रकार वे हमारे स्नेही जनोंको हमसे और हमको उनसे पृथक कर देते हैं। शान्त होकर और विश्वास पूर्वक अपने निष्कपट प्रेमका सदेश अपने स्नेहीके पास पहुँचाइये। इस बातका प्रयत्न तो कभी करियेगा नहीं कि वे नीचे आकर या पीछे हटकर आपके समीप आवे। अपनी आत्माको उनके पास पहुँचाइये। अपनी पवित्रता, आध्यात्मिक शक्ति और सौहार्दसे आपने उनकी सहायता और शुभचिन्ता की थी। यदि उनके लिये आप शक्तिशाली, पवित्र और तपस्वी होना चाहते हैं तो उनके वियोगके पश्चात् भी आपको इसकेलिये प्रयत्न करते रहना चाहिये।

इसलिये हमें इस बातपर पक्का विश्वास करना चाहिये कि हमारे स्नेहीजन हमारे लिये अब भी जीवन धारण कर रहे हैं और वे आज भी हमे उसी प्रकार प्यार कर रहे हैं जिस प्रकार वे आनन्दमय भूत-कालमें करते थे। यदि यह दिव्य दृष्टि हमे प्राप्त हो जावे तो हमे इसका स्वागत नि शक होकर चाहिये। परन्तु यदि हमे दिव्य दृष्टि न मिले तो हमें यह सदा स्मरण रखना चाहिये कि 'वे धन्य हैं जिन्होंने कभी दर्शन नहीं किया फिर भी विश्वास करते हैं।'

जीवनकी महत्तम स्फूर्ति

मनुष्यके हृदयके लिये महत्तम सुलभ स्फूर्ति यह जान लेना है कि इस विश्वमें उसका सच्चा स्थान और पद क्या है। जब तक हम यह सीखते रहेंगे कि मनुष्य असहाय पापी है, एक नरक-कीट है, अथवा मिट्टीका लोदा है या इसी प्रकारकी अन्य उपमायें जिनका मनुष्यने अपने और अपने साथियोंके हृदयको निरुत्साहित करनेके लिये आविष्कार किया है तबतक मनुष्यको सच्ची स्फूर्तिका प्राप्त कर लेना दुर्लभ होगा ; उस समय तक वह अपने समीपकी अनेक वस्तुओंके समन्वय और सौन्दर्यको देख नहीं सकता और वह अपनेजीवनकी सच्ची विभूतियोसे अनभिज्ञ रहता है।

मोक्षकी आशा हमें अपनेमें नहीं दिखाई पड़ती ; हम उसके लिये दूसरों पर निर्भर करते हैं। वास्तवमे हम मोक्षकी आशा ऐसी जगह करते हैं जहाँ उसका प्राप्त होना दुर्लभ है, इसी कारण हम अज्ञानी और अंधकारवासी हैं। हमारा विश्वास है कि हम पथभ्रष्ट हैं और हमारा सर्वनाश हो चुका है, एक क्रोधी भगवानके वहमपर ही हमारी रक्षा और विनाश निर्भर है, अतएव यह आश्चर्यकी बात नहीं है कि हमें जीवन और प्रकृतिसे तनिक भी स्फूर्ति नहीं मिलती। उसे सभी वस्तुओंसे स्फूर्ति मिल सकती यदि वह अपना सच्चा स्थान और पद जान जाता। यदि मनुष्य ईश्वरके क्रोधकी प्रगाढ छायामें रहता है और समझता है कि किसी क्षणमें उसका सर्वनाश हो सकता है तो उससे यह कैसे आशा की जा सकती है कि वह अपने समीपवर्ती ससारके सौन्दर्य और ज्ञानका आनन्द ले सकता है। यही मनुष्यकी सारी कठिनाइयोंका मूल और उसके दुःख एव असफलताका कारण है।

आत्मा जो कि वास्तविक प्राणी है और जो पुरुषका एक अश और उसीके समान है, अमर है और सर्वज्ञ भी है। जिस वस्तुको भगवानने मनुष्यको दिया है वह वस्तु कोई छीन नहीं सकता। ईश्वरने ही मनुष्यको जीवन दिया है। उसीने मनुष्यको जीती-जागती आत्माका रूप दिया है। उसीने मनुष्यको श्वास और 'साम्राज्य' दिया है और ससारमें ऐसी कोई शक्ति नहीं है जो मनुष्यके जन्मसिद्ध अधि-

कारोको छीन सके। यदि आदमी यह प्रमाणित कर सकता है कि मनुष्य वास्तवमें स्वर्गीय नहीं है, अथवा दूसरे शब्दोंमे, सृष्टिकर्ताकी इच्छाकी किसी विरोधिनी शक्तिने उसका स्वर्गीय गुण लूट लिया है, जिससे वह ईश्वर का अश नहीं रह गया, वरन् ऐसा जीव रह गया है जो निर्बल और निःसहाय रह गया हो, तब उसे यह भी मानना पड़ेगा कि ईश्वर सर्वशक्तिशाली, सर्वव्यापक और सर्वज्ञ नहीं हैं। यदि यह कहा जाय कि मनुष्य ईश्वरका पुत्र नहीं है। तब यह निश्चित है कि कोई ईश्वर से भी अधिक शक्तिशाली होगा और तब यह भी निश्चित है कि ईश्वर सर्वशक्तिशाली नहीं है और तब ईश्वर ईश्वर ही नहीं है। यदि पाप भी शक्तिसम्पन्न है और वास्तव में कोई वस्तु है तो ईश्वर सर्व-व्यापक नहीं कहा जा सकता है; इस प्रकार पुन· वही कठिनाई आ उपस्थित होती है। मनुष्य सदासे ईश्वरका पुत्र रहा है और वह सदा रहेगा भी। सारा भ्रम इस कारण उत्पन्न हो गया है कि मनुष्यने अपने स्थूल शरीरको अपनी आत्मासे अधिक महत्व दिया है। आत्मा स्थूल अथवा सासारिक वस्तु नहीं है। आत्मा का स्वभाव सृष्टिकर्ताके ही समान है। यह उस ईश्वरका ही अश और उसकी प्रतिमा है। इसीलिये यह आद्यन्तहीन है और उसीके समान अनादि और दैवी स्वभाव वाली है। यदि आत्माका विनाश हो सकता है तो वह आद्यन्तहीन कैसे कही जा सकती है। यदि मनुष्य ईश्वरसे अधिक शक्तिशालिनी शक्तिका प्रतिनिधि होता तो वह भगवानकी

इच्छाको अपनी इच्छानुसार बदल देता। कौन ऐसा करनेका दावा कर सकता है? इस प्रकार मनुष्य ही जीवन है और मृत्यु कोई वस्तु नहीं है। प्रश्न उठता है, क्या कारण है कि मृत्युका अस्तित्व नहीं माना जाय? कारण यह है कि ईश्वर मर नहीं सकता और मनुष्य स्वयं उसीका अंश और उसीका प्रतिबिम्ब है। यह स्पष्ट हो गया कि जिस स्थूल शरीरको सभी मनुष्य कहते हैं वह मनुष्य नहीं है। मनुष्य यह स्वप्न देखता है कि वह एक मांसपिण्ड है; वह स्वप्न देखता है कि वह स्थूल शरीर है। वह यह भी स्वप्न देखता है कि किसी जादू से उसके शरीर में एक शरीरी—आत्मा—निवास करती है, फिर भी वह यह नहीं समझता कि वह आई कैसे? और यह सोचा करता है कि आत्माको किस प्रकार अनन्त मृत्युसे बचाया जा सकता है? इसके अतिरिक्त अपनी 'आत्मा की रक्षा' का साधन उससे सर्वथा भिन्न है। बात तो यह है कि वह इतना निःसहाय और निराशा पूर्ण अवस्थाको प्राप्त कर चुका है कि वह यह कल्पना करने लगता है कि वह ऐसा पापी है जिसका सर्वनाश हो गया हो। बात भी ऐसी ही है, आत्म-ज्ञानकी दृष्टिसे वास्तवमें उसका सर्वनाश हो चुका है और उसका स्वर्गीय जन्मसिद्ध अधिकार भी छिन जाता है।

मनुष्य अपनी स्थितिकी जैसी कल्पना करता है वह ठीक वैसी नहीं है। जब वह इस बातका ज्ञान प्राप्त कर लेगा तब उसके जीवनमें अपूर्व-स्फूर्तिका सचार होगा। मनुष्यकी आत्मा अमर है, परन्तु उसके पास

एक स्थूल शरीर है और इस शरीरके ही द्वारा पृथ्वीपर वह अनुभव प्राप्त करता है। स्थूल मस्तिष्क सोच नहीं सकता ; मस्तिष्क मन नहीं है जैसा कि बहुतसे लोग समझते हैं। मस्तिष्क तो मनका अस्त्र है। और इसीके द्वारा मन इस स्थूल शरीरका निर्माण करता है। यदि इसे त्रिदेव कहा जाय तो अर्थ अधिक स्पष्ट हो जावेगा, पहला देव तो मनुष्यकी आत्मा है जो ईश्वरका अंश है, दूसरा देव मनुष्यका मन है जो विचार क्रियाकी प्रेरक शक्तिका केन्द्र है, तीसरा देव स्थूल शरीर है। यह वह खेमा है जिसमें रहकर वह जीवन-युद्धमें अपना कर्तव्य पूरा करता है। इस प्रकार आत्मा, मन और शरीरका त्रिदेव रूप होता है।

इसीलिए कहा गया है कि जैसा एक मनुष्य सोचता-विचारता है, वैसा ही वह हो जाता है। इसका अर्थ यह है कि जितने अंश तक आत्मा सांसारिक बन्धनोंसे मुक्त होकर संसारके समन्वयमें अपना निश्चित स्थान समझती जाती है उतने ही अंश तक पवित्र विचार मानसपटल पर अंकित होते जाते हैं और उतनेही अंशतक मन मनुष्यके शरीर और वदनपर अपना प्रभाव डालता है। इसीसे किसी व्यक्तिके चरित्रका निर्माण होता है। सभी जानते हैं कि आचारण ही भाग्य-विधाता है ; इसीलिए व्यवहारिक जगतमें मनके विचारोंके समान जीवन और परिस्थितियोंका निर्माण होता है।

जब विचार-शक्ति पर अज्ञानान्धकार का घटाटोप छा जाता है

तब मनुष्यको ऐसा भान होने लगता है कि वह ऐसा पापी है जिसका सर्वनाश हो गया हो। कारण यह है कि जबसे मनुष्यने होश सम्हाला तभीसे लोग इन शब्दोंका प्रयोग करते आये हैं। ज्यों-ज्यों वह शैश-वास्थामें अग्रसर होता जाता है त्यो त्यों उसका यह विश्वास दृढ कराया जाता है कि जन्मसे ही वह पापका पुतला है और यदि वह पवित्र हो सकता है या किया गया है तो वह कुछ संस्कारोंके कारण। अनेक संस्कारोंके पश्चात् भी उसे यही सिखाया जाता है कि वह पापी है, अज्ञानी है। फिर इसमें आश्चर्य ही क्या है यदि वह पाप करे? यदि उसके गुरुजनोंका ही विश्वास मिथ्या है और वही मिथ्याविश्वास जन्मसे ही उसके मस्तिष्कमें कूट-कूटकर भर दिया गया है तो फिर इसमें क्या आश्चर्य है यदि वह अज्ञानान्धकारके कारण इधर-उधर भटकता फिरता है। जैसा मनुष्य सोचता-विचारता है वैसा ही वह हो जाता है। अनिवार्य बातका कौन निवारण कर सकता है। वह प्रकाशकी आशामें अपनेको छोड़ इधर-उधर भटकता फिरता है, वह पुरोहितके द्वारा मोक्ष प्राप्तिकी आशा करता है। इसप्रकार अपने दुर्भाग्यके दोषी-की सृष्टि वह करता है और उसका नाम असुर या भूत रखता है। मनुष्यकी आसुरी-वृत्ति यही है जो उसकी दैवी वृत्ति पर हावी होकर उसके अस्तित्वको छिपा देती है।

एक बार किसी भोले शिशु को यह विश्वास कर दीजिये कि स्वभावसे ही वह पापी है और युवक एव प्रौढ व्यक्ति होने पर भी

उसके नेत्रोंके सामने वह झूठका काला परदा पडा रहता है और उसकी चेतना कभी दिव्य-दृष्टि नहीं प्राप्त कर पाती। इसके विरुद्ध हो ही कैसे सकता है ! जब हमें आत्म-ज्ञान हो जावेगा ; जब आत्माको यह बात मालूम हो जावेगी कि जैसी वह प्राणमें थी, वैसी ही आज भी है और वैसी ही सदा रहेगी ; जब मनुष्यकी समझमें यह आजावेगा कि सारे भय और पापकी भावनायें उस चेतना-युद्ध की शेषाश थीं, जब हम झूठे विश्वासोंका उन्मूलन कर रहे थे तब वह परमपिताके पुत्रकी भाँति अपना निश्चित स्थान ढूँढ निकालेगा और तब जान जावेगा कि वह भी पवित्र और अधिकारी है और उन सब वस्तुओंका मालिक है जिनको वह समझता था कि वह स्वय उनका दास है। तब उसके मनग्मनसकी ज्योति उसके मार्गको आलोकमय बना देगी ; तब अन्धकारमें चलनेकी तनिक भी आवश्यकता नहीं रह जावेगी। तब उसका स्थूलशरीर भगवानका मन्दिर होगा और वह उस विचित्र यत्रसे, जिसे हम स्थूल मस्तिष्क कहते हैं और जिसका हमने अशुद्ध विचारोंके मननमें ही प्रयोग किया है, सत्य और सुन्दर विचारो का मनन करेगा और इस प्रकार केवल शरीर ही आत्माका प्रतिविम्ब नहीं बनेगा, वरन् उसका सारा जीवन, परिस्थितियाँ और समीपवर्ती-वायुमण्डल भी अखिल संसयमें व्याप्त समन्वयके अनुकूल हो जावेगा। जैसा उसके भीतर होगा वैसा ही बाहर।

ऐसी ही अवस्थामें उसे जीवनकी महत्तम स्फूर्ति प्राप्त होगी। तब

उस सत्य और सुन्दरका दर्शन होगा जहाँ पहले उसे असत्य और असुन्दर ही दिखाई देता था जहाँ पहले उसे अन्धकार दिखाई दे रहा था वहाँपर अब उसे जगमगाता प्रकाश दिखाई देगा। प्रत्येक घटनामें उसे अनन्त शांतिका दर्शन होगा और प्रत्येक मार्ग आत्मज्ञानका राज-मार्ग होगा।

और तब जीवनकी स्फूर्तियाँ उनके लिए अनन्त हो जावेंगी।

एवमस्तु।

श्री रामविलास पोद्दार स्मारक ग्रन्थमाला

स्थापना और उद्देश्य

क—यह ग्रन्थमाला नवलगढ तथा बम्बई के सेठ आनन्दीलाल जी पोद्दार के कनिष्ठ पुत्र स्वर्गीय कुँ० श्री रामविलास पोद्दार की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिये स्थापित की गई है।

ख—इस ग्रन्थमाला का उद्देश्य ससार की महान् भाषाओं के महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के रूपान्तर तथा उत्कृष्ट मौलिक ग्रन्थों द्वारा राष्ट्रभाषा हिन्दी के भण्डार की अभिवृद्धि करना है।

साधारण नियम

१—इस ग्रन्थमाला की सभी पुस्तकें समान आकार-प्रकार तथा समान मूल्य की होंगी।

(प्रत्येक पुस्तक साइज मे १६ पेजी, अनुमानतः १० से १२ फार्म तक तथा मूल्य में रु० १।) की होगी।)

२—इस माला से वर्ष में कम से कम ३ और अधिक से अधिक ६ पुस्तकें प्रकाशित की जायेंगी, पर यह सख्या हिन्दी संसार की सहानुभूति पर निर्भर रहेगी।

स्थायी ग्राहकों के लिये

१—जो महानुभाव ॥) आना प्रवेश-शुल्क देंगे उनका नाम स्थायी ग्राहकों में लिख लिया जायगा और उन्हें माला की प्रत्येक पुस्तक की एक २ प्रति पौने मूल्य मे मिलेगी।

२—प्रत्येक पुस्तक प्रकाशित होने की सूचना के १५ दिन पश्चात् स्थायी ग्राहकों के पास वी० पी० द्वारा भेज दी जायगी।

रामविलास पोदार स्मारक ग्रन्थमाला

का

प्रथम पुष्प

रामविलास पोदार

पृष्ठ स० ३२० जीवन-रेखा और स्मृतियाँ स्थायी ग्राहकों के लिये मूल्य रु० २।)

सम्पादक

जवाहिर लाल जैन, एम० ए०, विशारद ।

The book has been well edited and beautifully got up '

—Leader

'Besides being beautifully printed and nicely got up it contains some good and nice compositions both in prose and verse in Hindi, Gujrati, Marathi and English . on the whole the work is worth preserving by all Marwaries in general ... ' —Bombay Chronicle

'पुस्तक की छपाई-सफ़ाई बहुत सुन्दर है ।' —विश्वमित्र

'पुस्तक बहुत सुन्दर छपी है और अनेक चित्रों से सजाई गई है ।' —हिन्दुस्तानी

'पुस्तक आकार-प्रकार और कलेवर में प० जवाहरलालजी की 'मेरी कहानी' का हूबहू नमूना है ।' —वाणी

'.. आशा है हिन्दी मे यह ग्रन्थ पथ-प्रदर्शन का काम देगा ।

—श्री वेंकटेश्वर समाचार

'हिन्दी मे बहुत ही कम पुस्तकें इस शान-शौकत और गेट-अॅप के साथ प्रकाशित हुई होंगी ।' —राजस्थान

का

द्वितीय व तृतीय पुष्प

संस्कृत साहित्य का इतिहास

लेखक—सेठ कन्हैयालाल पोद्दार।

प्रथम भाग—इस ग्रन्थ में काव्य-शास्त्र के सुप्रसिद्ध रीति-ग्रन्थों एव उनके प्रणेताओं के परिचय तथा काल-निर्णय के सम्बन्ध मे ऐतिहासिक निरूपण किया गया है। पृ० स० ३३४ मूल्य १।) सजिल्द।

द्वितीय भाग—इस ग्रन्थ में काव्य-ग्रन्थों के विषय, काव्य के प्रयोजन, काव्य के हेतु एव काव्य के लक्षण आदि पर विभिन्न आचार्यों के मतों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण और काव्य के पच सिद्धान्त रस, अलङ्कार, रीति, वक्रोक्ति और ध्वनि का स्पष्टीकरण तथा इनकी पाँचों सम्प्रदायों का आलोचनात्मक विवेचन कर उनका रहस्योद्घाटन किया गया है। पृ० स० २१४ मूल्य १।) सजिल्द।

सम्मतियाँ—

These Hindi Volumes mark a sad-letter day in the history of Hindi literature It is not within our knowledge if any book of the like of the present publication is in existence

—Amrit Bazar Patrika.

This well-written and interesting work gives an account of the development of the Sanskrit Alankara-sastra or poetics, and attempts to popularise the subject through the medium of Hindi There is, so far, no comprehensine treatment of the subject in any Indian

vernacular and the author has been able to supply a long-felt want Such publications are indeed to be welcomed. For the neat printing and attractive get-up of the book and its size and contents, the price is exceedingly moderate

—Modern Review

इस पुस्तक में लेखक महोदय के काव्य-शास्त्र-सम्बन्धी गभीर अध्ययन का प्रमाण मिलता है। संस्कृत कवियों के वर्गीकरण का अच्छा प्रयत्न किया गया है। वाल्मीकि के काल-निर्णय में समस्त पौरस्त्य व पाश्चात्य विद्वान् ऐतिहासिकों के मतों का निराकरण सफलता-पूर्वक किया गया है। —सरस्वती

संक्षिप्त विषय-सूची

प्रथम भाग

द्वितीय भाग

रामविलास पोद्दार स्मारक ग्रन्थमाला

का

चतुर्थ पुष्प

अमर जीवनकी ओर

[LIFE'S INSPIRATION]

by

LILLY ALLEN

अनुवादक—श्री शिवप्रसाद सिंह विश्वेन

इस ग्रन्थ-रत्न में प्रकृति से स्फूर्ति प्राप्त कर अपने जीवन को उन्नत तथा महान् बनाने का मार्ग दिखलाया गया है। आधुनिक युग के कृत्रिम तथा स्वार्थपूर्ण वातावरण को हटाने पर पुस्तक अत्यन्त उपादेय सिद्ध होगी।

प्रकाशक—

श्री रामविलास पोद्दार स्मारक ग्रन्थमाला समिति,
नवलगढ़ (राजपूताना)।